Chap - 5

अध्याय - पाँच

साठोत्तरी हिन्दी काव्य - भाषा का अभिव्यंजना - शिल्प ।

- भाषा के विविध स्तरीय
- शब्द संयोजना एवं शब्द शक्तियाँ
- संवाद, संयोजना
- काव्य भाषा का वैविध्य
- काव्य भाषा के तेवर

ळळळळळ

अध्याय - पाँच

साठोत्तरी हिन्दी काव्य - भाषा का अभिव्यंजना शिल्प :

भाषा सिर्फ अभिव्यक्ति तथा सम्प्रेषण का ही साधन नहीं है, वह प्रत्युक्त संवेदना को भी नियमित और अनुशासित करती है, साठोत्तरी काल के कवियों की यही मान्यता है, काव्य सबसे पहले शब्द है, और सबसे अन्त में भी यही बात बन जाती है, इसका तात्पर्य यही था, कि काव्यानुभव अपने साथ ही एक भाषिक व्यवस्था करता है, परन्तु इस अनुभव का समूचा स्वरूप भी शब्द के भीतर ही बनता है, इससे साफ जाहिर होता है, कि अनुभव को जानने का भी एक साधन है शब्द । अगर हम चिन्तन के आधार पर चलें, तो काव्य वस्तु भाषा से स्वतन्त्र कोई वस्तु नहीं होती, मानव बोध और कल्पना की विशिष्टता ही है, वस्तुओं को कोई नाम देना, सम्बोधित करना, अँधेरे से उजाले की तरफ ले जाना, सृजनात्मक कल्पना इस दिशा में दूर या निकट के जो सम्बन्ध स्थापित करती है, वही अपरिचित या नये आवेग तक पहुँचना चाहती है, यह सब जाने, अनजाने एक भाषा व्यवस्था को आकार देती है ।

काव्य सृजन एक प्रकार की साधना है, जो प्रत्येक सामान्यजन की शक्ति एवं सामर्थ्य से परे है, काव्य के प्रणयन हेतु विशेष प्रकार की "प्रतिभा" की आवश्यकता होती है । §1§

कवि अपनी प्रतिभाशक्ति द्वारा कल्पना को उन्मीलित करके अपने अन्तर्मन की गुहा में सुप्तावस्था में पड़े धूमिल, अस्पष्ट एवं अल्प भावों और विचारों को स्पष्ट और स्थापित करता है, रचयिता की सामूहिक भावनायें आन्तरिक प्रेरणा और शक्ति के कारण उद्वेलित होकर बाह्याभिव्यक्ति में रूपान्तरित होती है । §2§

विश्व के प्रत्येक घटनाक्रम का तथा उत्थान तथा पतन का एवं आकर्षण का प्रत्येक कवि के संवेदनशील भावुक मन पर इसका प्रभाव पड़ता है, जब इसी सत्य एवं सौन्दर्य को वह रेखांकित करता है, तभी वास्तविक कला का जन्म होता है,

---

1. प्रतिभैव च कवीनां काव्यकारण कारणम् काव्यानुशासनम्- हेमचन्द्र (प्रथम अध्याय§
2. ट्रान्सफोरमेशन ओफ नेचर इन आर्ट - डॉ0 अे0 कोमर स्वामी -पृ0-164-169

अभिव्यक्ति का यही बाह्यस्वाकार वह रचना है, जो कवि की अनुभूतियों का मूर्त एवं सजीव चित्रण है, कविता का यही सत्य एवं सौन्दर्य पक्ष "वस्तु" पक्ष को तथा बाह्यरूप उसके "शिल्प" पक्ष का प्रतिनिधित्व करता है ।

कविता का आकार साठोत्तरी कवियों के लिए ढाँचे या शिल्प का प्रश्न नहीं है, वस्तु के साथ शिल्प का घनिष्ठ सम्बन्ध है, संवेदन तत्वों को शिल्प ही स्वाकार प्रदान करता है, और उन्हे प्रभावशाली भी बनाता है, "अज्ञेय" के कथानुसार वस्तु को शिल्प से अलग नहीं किया जा सकता । " §1§

शिल्प सिर्फ स्वाकार या "फॉर्म" नहीं है, यह उससे अधिक है, इस लिए अज्ञेय समेत प्रायः सभी नये कवियों ने शिल्प को पहले के कवियों की तुलना में कहीं अधिक महत्व दिया है, वस्तु और शिल्प के सामंजस्य से रचना अधिक प्रभावशाली बन जाती है, काव्य में शब्द के माध्यम से अर्थ का विधान होता है, शब्द विधान का सम्बन्ध शिल्प एक अविभाज्य बंधन में बँधे रहते हैं, उसी प्रकार का सम्बन्ध शिल्प और वस्तु में होना चाहिए, नयी कविता के कुछ कवियों ने इस दिशा में कुछ नये प्रयोग किये हैं, चेतना प्रवाह, मुक्त - आसंग, सूक्ष्म, व्यंग्य, अनुस्मृति, स्वैर, कल्पना, स्वप्न चित्र, मिथक, आदि से सम्बन्धित प्रयोग हुए है, शिल्प का मुख्य केन्द्र बिन्दु बिम्ब, प्रतीक, अप्रस्तुत, भाषा, शब्द, छन्द आदि को प्रमुख माना गया है । एक उद्धरण द्रष्टव्य है :-

" बादलों का हाशिया है आस-पास
बीच कूजों की डार, कि
लिखी पांत काली बिजली की
अषाढ़ की निशानी ।§2§

कॉलरिज ने कहा कि "प्रोयट्री द बेस्ट वर्डस् इन द बेस्ट ऑर्डर § अर्थात् कविता उत्तमोत्तम शब्दों का उत्तमोत्तम विधान है ।§3§

कॉलरिज तथा मलार्मे, रिचर्ड्स, आचार्य विश्वनाथ आदि की काव्य भाषायें, यह स्थापित करती हैं, कि भाषा का एक विशेष प्रकार का प्रयोग ही कविता है, इसलिए यदि अज्ञेय कहते हैं, कि "काव्य के जो भी गुण बताये जाते हैं,

---

1. तार सप्तक - प्रथम संस्करण - पृ० - 17
2. इत्यलम् - कविता संग्रह - डॉ० अज्ञेय - पृ० - 204

या बताये जा सकते हैं । अन्त में यह सब भाषा के ही गुण है, काव्य स्वयं भाषा से ही उत्पन्न रूप है । कविता वस्तुतः भाषा का अधिकतम् सम्भव अर्थ से सम्पृक्त रूप है । (एजरा पाउन्ड) (1)

कविता की भाषा को परिभाषित कर पाना अत्यन्त दुष्कर कार्य है, वैसे "बार फील्ड कथनानुसार जब शब्दों को इस प्रकार चुना और नियोजित किया जाये कि उनका अर्थ सौन्दर्य तात्त्विक कल्पना को जागृत करे, अथवा जागृत करने की चेष्टा करें, तो इस (चयन एवं नियोजन) के परिणाम को काव्यात्मक पदशत्या (पोयटिक डिक्शन) कहा जा सकता है । (2)

"काव्य - भाषा का लक्ष्य तथ्यात्मक सूचना देना दार्शनिक या वैज्ञानिक प्रक्रियाओं, निष्कर्षों एवं विचारणाओं को कहना या दैनिक जीवन के क्रिया - कलाप को चलाना नहीं होता है, किन्तु कवि की सौन्दर्य तात्त्विक अनुभूतियों को इस प्रकार अभिव्यक्त करना होता है, कि श्रोता और पाठक में भी वह अभिव्यक्ति सौन्दर्यतात्त्विक अनुभूति को जागृत कर सके, रिचर्डस ने इसी लिए भाषा के दो रूप माने हैं, पहला रूप सांदर्भिक (रेफरेन्शल) रूप हैं, जिसे भाषा का वैज्ञानिक प्रयोग कहा जाता है, और दूसरा उसका सवेंगात्मक (इमोटिव) रूप है, जिसे भाषा का काव्यात्मक प्रयोग कहा जा सकता है । (3)

क्रिस्टोफर कॉडवैल भी कविता को "हाइटिन्ड लैंग्वेज" ही कहते हैं । यह भिन्नता कविता के क्षेत्र में भाषा को एक दर्जा प्रदान करती है । (4)

किन्तु यह मान लेना जरूरी नहीं है, कि कविता की भाषा का उस भाषा से कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता, जिसे सामान्य बोल-चाल की भाषा या "वैज्ञानिक उपयोग की सांदर्भिक भाषा कहा जा सकता है, कई स्तरों पर वह इन भाषाओं के साथ साम्य भी रखती है, इस समता और विषमता के कारण कविता की भाषा के अध्ययन को तीन भागों में बाँटा जा सकता है ।

1. वैयाकरणिक 2. शैली वैज्ञानिक (स्टाइलिस्टिक) 3. सौन्दर्य-तात्त्विक

---

1. भाषा और संवेदना - डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी - पृ० - 39
2. पोयटिक डिक्शन- (ओवेन बारफील्ड) -पृ० - 41
3. ट्वेन्टिअथ सेन्चरी लिटरेरी क्रिटिसिज्म - सम्पादक - डैविड लॉज -पृ०- 112
   प्रिन्सिपल्स ऑव लिटरेरी क्रिटिसिज्म - रिचर्डस - पृ० - 267
4. इल्यूजन एन्ड रियल्टी - कॉडवैल - पृ० - 5

ये काव्य - भाषा के मूल आधार को खोजनें में मदद रूप होती है, इसके द्वारा भाषा और संवेदना के संश्लिष्ट विकास को विश्लेषित किया जा सकता है, हिन्दी कविता के क्षेत्र में सबसे ज्यादा, राजस्थानी, मैथिली, अवधी, ब्रजभाषा आदि बोलियाँ मुख्य रूप से काव्य-भाषा का आधार बनती रही हैं ।

भारतेन्दु युग में खड़ी-बोली गद्य की भाषा के रूप में बिना किसी विवाद के स्वीकृत कर ली गई है, किन्तु कविता के क्षेत्र में ऐसा नहीं हुआ, वैसे आधुनिक काल से पूर्व हिन्दी में गद्य की कोई सुदीर्घ एवं सुपुष्ट परम्परा नहीं थी, किन्तु कविता में यह परम्परा विद्यमान थी, काव्य भाषा के रूप में भक्ति काल एवं रीति काल में ब्रज भाषा अत्यन्त दृढ़तापूर्वक प्रतिष्ठित हो चुकी थी, भाषा वैज्ञानिक स्तर पर भाषा को अभिन्न या भिन्न करने वाले मानदन्ड कविता की भाषा पर लागू नहीं होते, कविता की भाषा में शब्द "शब्द मात्र" नहीं होते बल्कि वे पूरी एक संस्कृति और संवेदनशीलता के व्यंजक होते हैं ।

"हिन्दी और उर्दू का अन्तर व्याकरण का न होकर मुख्यत: उस सांस्कृतिक वातावरण का है, जो काव्य भाषा में व्याकरण की तुलना में कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । " (1)

"हिन्दी औरउर्दू का काव्य बोध बहुत अलग-अलग है, "हिन्दी की काव्य भाषा व्यंजना को अधिक महत्व देती है, किन्तु उर्दू में सीधी - सादी सहज सरल भाषा काव्य - विधान के अधिक अनुकूल मानी जाती है, क्यों कि उर्दू दरबार और बाजार दोनों की ही भाषा रही है । "(2)

द्विवेदी युग की काव्य-भाषा के सम्बन्ध में सामान्यत: यह स्थापना सामने रखी जाती है, कि उसमें काव्यगुण का विकास नहीं हो पाया है, उसमें गद्यात्मकता बहुत अधिक है, वह विचार करने की भाषा के अधिक निकट है । (3)

कविता की भाषा - जैसी गहरी अर्थशक्ति इनकी रचनाओं में नहीं - मिलती, वह अविकसित काव्य भाषा है । (4)

---

1. भाषा और संवेदना - रामस्वरूप चतुर्वेदी - पृ० - 46
2. -वही- पृ० - 47
3. आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान-केदारनाथ सिंह-पृ०- 124
4. भाषा और संवेदना - रामस्वरूप चतुर्वेदी - पृ० - 5

" कविता और पद्य " दोनों में बड़ा अन्तर है, कविता मनोंविकारों की सजीव प्रतिभा, अतएव लोकोत्तरानन्द की जननी है, और पद्य, छन्दोबद्ध वाक्य नियम विशेष पर तुला हुआ वर्ण - समूह मात्र है । " §1§

काव्य-भाषा के क्षेत्र में यह मान्यतायें काफी हद तक सत्य हैं, इस बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए प्रस्तुत उद्धरण दृष्टव्य है जिसमें पद्य के छन्दोबद्ध रूप को देखा जा सकता है :-

1. वैभव दशा में देश प्रायः जिस समय सब व्याप्त थे,
निःशेष विश्वों में तभी हम प्रौढ़ता को प्राप्त थे ।
संसार को पहले हमीने ज्ञान-भिक्षा दान की,
आचरण की, व्यापार की, व्यवहार की, विज्ञान की । §2§

तथा

2. अरुण यह मधुमय देश हमारा ।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा ।
हेम कुम्भ ले उषा सबेरे, भरती ढुलकाती सुख मेरे,
मंदिर ऊँघते रहते जब जगकर रजनी-भर तारा । §3§

सम्पूर्ण द्विवेदी युगीन कविता पर दृष्टिपात करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है, कि इस युग के कवियों ने जितनी कविता संस्कृत निष्ठ या उर्दू निष्ठ भाषा में लिखी, उससे कहीं अधिक कविता उस भाषा में लिखी जो बोलचाल की भाषा का साहित्यिक रूप था, जिसमें बोल-चाल में प्रयुक्त होने वाले संस्कृत उर्दू - देशज तथा कभी-कभी अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग होता था । एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" दिवस का अवसान समीप था,
गगन था कुछ लोहित हो चला ।
तरुशिखा पर थी, अब राजती,
कमलिनी - कुल - वल्लभ की प्रभा । §4§

काव्य - भाषा में काव्य- गुण की क्षीणता का मूल कविताओं की काव्य संवेदना की बनावट में है, इस युग के कवि का काव्य बोध सरल और सपाट है, उसका निर्माण पवित्रतावादी एवं सुधारवादी युगीन प्रवृत्तियों से हुआ है, कवि

---

1. भारत - भारती - मैथिली शरण गुप्त - पृ0 - 22
2. -वही- पृ0 - 22
3. चन्द्रगुप्त - जय शंकर प्रसाद - पृ0 - 89
4. प्रिय प्रवास - हरि औध - पृ0 - 1

को अपने अनुभव की अपेक्षा युग के सामान्य विचार प्रवाह पर अधिक आस्था है, कवि को ऐसी भाषा लिखनी चाहिए, जिसे सब कोई सहज में समझ ले, और अर्थ को भाँति-भाँति समझ सके । द्विवेदी युग का कवि जहाँ भाषा की व्याकरणगत, शुद्धता, गद्य-पद्य की भाषा की एकता, भाषा की सरलता, स्पष्टता और अर्थगत् निश्चितता पर बल देता है, वहाँ छायावादी कविभाषा के राग, नादमय, चित्रमयता, छाया-मयी, वक्रता, ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौन्दर्यमय, प्रतीकात्मकता, तथा उपचार वक्रता पर बल देता है । §1§

" एफ.आर. लीविस का कथन है, कि छायावादी काव्य - शिल्प के सम्बन्ध में भी यही बात है, कि " द ओनली टेकनीक दैट मैटर्स इज दैट, ह्विच कम्पैल्स वर्ड्स टु एक्सप्रेस एन इन्टेन्सली पर्सनल वे ऑव फीलिंग सो दैट द रीडर रैस्पॉन्ड्स नोट इन ए जनरल वे दैट ही नोज बिफोर हैन्ड टु बी पोयटिकल, बट इन ए पिसाइज, पर्टीकुलर वे दैट नो क्रीक्वेंटिंग ऑव् पोपुलर स्न्थालॉजीज कुड हैव मेड फेमिलियर टु हिम ।" §2§

शिल्प की इस प्रकार की विशिष्टता छायावादी काव्य - भाषा को न केवल द्विवेदी युगी - काव्य - भाषा से अलग करती है, बल्कि प्रत्येक छायावादी कवि की काव्य-भाषा को एक दूसरे से अलग व्यक्तिगत प्रदान करती है, इस लिए प्रत्येक छायावादी कवि के कुछ विशिष्ट शब्द भी हैं । जैसे :- "प्रसाद" के "मधु" "माया", "मूर्छना" इत्यादि, "निराला" के "गहन" दृग" मृदु आदि "पन्त" के स्वर्ण, स्वप्निल, नीख, कंपन, आदि "महादेवी" वर्मा के अभिशार, तुहिन, नीहार, पीड़ा, विहग, आदि, जो द्विवेदी युगीन कवियों में नहीं है, इन शब्दों की विशिष्टता केवल आवृत्ति की अधिकता के कारण नहीं है, बल्कि ये शब्द कवियों के निजी संवेदना-जगत के प्रतिबिम्ब हैं । §3§

छायावादी काव्य-भाषा मुख्य रूप से तत्सम बहुल भाषा है, किन्तु उसमें ब्रजभाषा तथा स्थानीय बोलियों एवं उर्दू, बंगला तथा अंग्रेजी से भी शब्द लिये गये हैं, ब्रजभाषा तथा स्थानीय बोलियों के लक-लक निपट, निठुराई हेर, चोरे, ठौर, निठुर, काजर, कजरारे, धुंआरे, लाज, औंर, पखार, चितचोर छलिया, हौले,

---

1. काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध - जय शंकर प्रसाद - पृ0- 123-126
2. छायावाद की प्रासंगिकता - डॉ0 रमेशचन्द्र शाह - पृ0 - 11
3. आधुनिक हिन्दी कविता का अभिव्यंजना शिल्प - डॉ0 हरदयाल - पृ0- 127 प्रकाशक : सरस्वती प्रेस - दिल्ली, इलाहाबाद ।

पांति, करतार, भाना, मरम, छिछलना, बूड़ना, बिछोह, दूज, रोआं, पैरना, उमह, हिय, बैन, लोल, अंधियारी, अमोल, उसांस, ओठ, कसक, कोना, गगरी,(1) चितेरा, छांह, धूल, नित, निबाह, परछाई, पहरा, फूंक, बयार, बाती, बुलबुले, बेंदी, रंग-रेली, सपने, मिसरी, हठीला इत्यादि ।(2)

उर्दू के नशा, दिवानी, दाग, प्याले, बेहोशी, अरमान, खारे, खुमार, तूफान, दलदल, परदा, बुल-बुल, राह, साकी, रकाब, समुन्दर, सिर्फ, गो आदि।{3}

छायावादी काव्य-भाषा में शब्द और अर्थ का कोशगत सम्बन्ध {अभिनय} गौण हो गया है, शब्द और अर्थ के इस स्थिर और मूर्त सम्बन्ध के विघटित करके उसे अस्थिर और अमूर्त करके अर्थ की अनन्त सम्भावनाओं से गर्भित कर दिया गया है,(4 परम्परागत शब्दावली में छायावादी काव्य-भाषा शब्द की लक्षणा और व्यंजना शक्तियों का सबसे अधिक उपयोग आधारित हैं,(5) लक्षण और व्यंजना के सभी भेदों, के उदाहरण छायावादी कविता में सरलता से मिल जाएँगे, किन्तु वहाँ शब्द - शक्तियों के इस प्रकार के उपयोग का लक्ष्य शास्त्र स्थिति का सम्पादन नहीं है, बल्कि विशिष्ट अनुभूति की अभिव्यक्ति है ।(6)

निम्नलिखित पंक्तियों में "क्षितिज" शब्द का प्रयोग इस प्रकार किया गया है, कि वह न केवल अमूर्त से मूर्त हो उठा है, किन्तु उसे नयी अर्थवत्ता भी मिल गयी है, एक उद्धरण देखिए :-

" तुम हो कौन और मैं क्या हूँ
इसमें क्या है धरा सुनो ।
मानस - जलधि रहे चिरचुम्बित
मेरे क्षितिज उदार सुनो ।(7)

---

1. कवयित्री महादेवी वर्मा - शोभनाथ यादव - पृ0 - 219
2. आधुनिक हिन्दी काव्य शिल्प - मोहन अवस्थी - पृ0 - 316
3. छायावाद - डॉ0 नामवर सिंह - पृ0 - 111
4. हिन्दी कविता में युगान्तर - प्रो0 सुधीन्द्र - पृ0- 303
5. कवियित्री महादेवी वर्मा - शोभनाथ यादव - पृ0 - 222
6. आधुनिक हिन्दी कविता का अभिव्यंजना शिल्प - डॉ0 हरदयाल - पृ0- 133
7. लहर - जयशंकर प्रसाद - पृ0 - 10

क्षितिज की यह नयी अर्थवत्ता नयी अनुभूति का फल है, किन्तु उसकी सिद्धि गौणी लक्षणा के द्वारा की गई है, "मानस जलधि" की सारोपा लक्षणा के सन्दर्भ में क्षितिज की साध्यवसाना लक्षणा का अर्थ खिल उठा है ।

जब कि जय शंकर प्रसाद जी के काव्य में साध्यवासना गौणी लक्षणा की प्रधानता होने से उनके शब्दों में प्रतीकात्मकता की बहुलता होती है, उनके काव्य में हर चीज प्रतीकत्व का रूप प्राप्त कर लेती है । एक उद्धरण देखिए :-

" मधुमय वसन्त जीवन-वन के, वह अंतरिक्ष की लहरों में,
कब आये थे, तुम चुपके से, रजनी के पिछले पहरों में । [1]

"काम सर्ग" से उद्धृत प्रारम्भ की इन पंक्तियों में वसन्त, अन्तरिक्ष, लहरों, रजनी, पिछले पहरों आदि सब में साध्यवासना गौणी लक्षणा है, और सब यौवन काल के क्रिया - व्यापारों और मनोभावनाओं के प्रतीक है ।

छायावादी कवियों में सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" और "सुमित्रानन्दन पंत इन दोनों कवियों में काव्य - भाषा में चमत्कार के प्रति आकर्षण था, जब कि "महादेवी वर्मा" को छायावादी - काव्य - भाषा की सभी उपलब्धियाँ सिद्ध रूप में प्राप्त हुई थीं, छायावाद के अमूर्त्त शब्दों का सबसे अधिक प्रयोग हुआ है, "निराला" की कविता "संध्या सुन्दरी" महादेवी वर्मा की कविता "धीरे-धीरे उतर क्षितिज" से "आवसन्त रजनी" की उपचार वक्रता कम मूर्त कम अनुभूति पूर्ण और अधिक अलंकृत है । उनके अपने विशिष्ट शब्द बहुत कम है, लक्षणा तो छायावादी काव्य-भाषा का प्राण तत्त्व है, किन्तु कहीं हमें प्रचुर मात्रा में व्यंजना के विविध रूप मिल जाते हैं ।

छायावाद काल के दरम्यान सबसे समृद्ध काव्य - भाषा के रूप में खड़ी बोली का विकास हुआ, यहाँ तक वह सामान्य लोगों में भी प्रिय हो गई, और उन दिनों कई कवियों की कई प्रसिद्ध रचनाएँ प्रकाशित हुई, जिनमें "मैथिली शरण गुप्त" की "साकेत" यशोधरा तथा द्वापर जैसी कृतियाँ अस्तित्व में आयीं, जिसकी भाषा में जो लाक्षणिक सौन्दर्य है, वह छायावादी कविता के अभाव में कभी सम्भव नहीं हो सकता, वैसे छायावाद काल में जिन कवियों ने कविता लिखी, या फिर

---

1. " कामायनी " - जय शंकर प्रसाद - पृ0 - 63

छायावाद के बाद जिन कवियों ने काव्य रचनाएँ की, उनमें प्रमुख कवि थे, "माखन लाल चतुर्वेदी" रामधारी सिंह दिनकर, रामेश्वर शुक्ल, अंचल, जानकी बल्लभ शास्त्री, अज्ञेय, गिरिजा कुमार माथुर आदि कवियों की कविताओं में छायावादी काव्य-भाषा का प्राधान्य देखा जा सकता है ।

जहाँ तक छायावादी काव्य-भाषा के विकास का प्रश्न है, इस भाषा का विकास अपने काल में खूब हुआ, आगे चलकर यह काव्य - भाषा अपने शब्द जाल में रहकर फँस गई, इसकी शब्दावली में, आडंबर का प्रभाव दिखाई पड़ने लगा, इसमें ऐसी रूढ़ शब्दावली का प्रयोग होने लगा, जो वास्तव में, अव्यवहारिक प्रतीत होने लगी, किसी भी काव्य - भाषा में तथा शब्द चातुर्य में परिवर्तन होना स्वाभाविक है, छायावादी काव्य-भाषा व्यक्तिवादिता के तीव्र विकास से सम्बद्ध थी, यह व्यक्तिगत साधना की चीज बन गई थी, इन्हीं सब कारणों से "महादेवी वर्मा" ने "यामा" और "दीपशिखा" जैसी कविताओं की रचना करने के बाद कविता की रचना बन्द करने का निर्णय किया ।

छायावादोत्तर काल में जो गीत-काव्य लिखे गये, उनमें भी कहीं व्यक्तिवादिता का फुट मिलता है, उन दिनों गीत काव्य एवं राष्ट्रीय - सांस्कृतिक कविता भाषा के स्तर पर छायावादी काव्य भाषा की रूढ़ शब्दावली से मुक्त होने का प्रयास कर रही थी, यह काल कविता को बोल-चाल की सहज - सरल भाषा की ओर ले जाने का एक घनिष्ठ प्रयास था, छायावादी कवियों में "बाल कृष्ण शर्मा" "नवीन" जैसे कवि की भाषा में कहीं-कहीं अराजकता को पढ़कर "हरिऔध" की "प्रिय प्रवास" की भाषा का स्मरण हो आता है, एक उद्धरण द्रष्टव्य है :-

" आ जाती है पुरजन प्रिया नेह में यह पगी-सी,
गोरी बाहें, अमल सुपटा, वेष्टिता हैं, ठगी-सी,
मानों कोई लचक लतिका भक्ति के भाव धारे,
पुष्पाविष्टा मुदित मन हो, नाचती कुंज द्वारे । " ॥1॥

---

1. उर्मिला - बाल कृष्ण शर्मा "नवीन" - पृ0 - 187

इसी प्रकार "उर्मिला" काव्य में "मैथिली शरण गुप्त" जैसी भाषा के दर्शन भी हमें देखने को मिलते हैं, एक उद्धरण द्रष्टव्य है :-

" मुझको जीवन सार्थकता का, देवि, आज संदेश मिला ।
मुझे ज्ञान - विज्ञान प्रचारित, करने को वन देश मिला । §1§

उत्तर छायावादी काव्य में उर्दू शब्दों का प्रयोग जमकर हुआ है, जैसे वर्दी, नाकिस, आशिकी, कक्त, रौकीन, कीमत, जालिम, नक्शा, फरियाद, बर्बाद, करम, नजर, गुनाह, आलम, दिवाना, ऐसे हजारों उर्दू शब्दों का प्रयोग होने का एक मात्र कारण यह है, कि उर्दू की काव्य-भाषा का सरल होना है, "भगवती चरण वर्मा" की निम्नांकित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं :-

हम दीवानों की क्या हस्ती
हैं आज यहाँ कल वहाँ चले
मस्ती का आलम साथ चला
हम धूल उड़ाते जहाँ चले । §2§

उत्तर छायावादी काव्य की भाषा अभिधात्मक है, जब कि द्विवेदी युगीन काव्य-भाषा इससे भिन्न है, किन्तु इस युग की काव्य-भाषा में अनुभूति की रागात्मकता की झलक दिखाई पड़ती है :-

" आयगा मधुमास फिर भी, आयगी श्यामल घटा घिर,
आँख भरकर देख लो अब, मैं न आऊँगा कभी फिर,
प्राण तन से बिछुड़ कर कैसे मिलेंगे ?
आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगें । §3§

उक्त पंक्तियों में जो काव्यात्मकता है, वह संवेग की है, उत्तर छायावादी कवियों ने सरल और सपाट बयानी भाषा का संवेगात्मक उपयोग करके उसे काव्यात्मक बनाया, परन्तु जब संवेग खत्म हो जाने पर इनकी भाषा या तो बिल्कुल गद्य रूप में बदल गई, या फिर किसी रूढ़ शब्दावली में परिवर्तित हो गई, जैसे :- नरेन्द्र शर्मा की "द्रौपदी" "उत्तरजय" "सुवीरा" "बहुत रात गये"

---

1. उर्मिला - बाल कृष्ण शर्मा "नवीन" पृ0 - 194
2. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि - भगवती चरण वर्मा - पृ0 - 104
3. प्रवासी के गीत - नरेन्द्र शर्मा - पृ0 - 15

"प्यासा निर्झर" जैसी काव्य रचनाओं की भाषा भावहीन शब्द चातुर्य का श्रेष्ठ उदाहरण बन गई शब्द कोश से कठिन शब्दों को चुनकर उसे छन्दोबद्ध करना उनका व्यक्तिगत शौक सा बन गया है, उन्होंने कविता लिखने के बजाय दार्शनिक चिन्तन को सुलझाने तथा व्याख्या करने में व्यस्त दिखाई देते हैं, एक उद्धरण देखिए :-

पृथा स्वयं पृथिवी हैं देव - बहन - शक्ति - प्राप्त ।
दिव्यनिष्ठ पार्थिव को समझें हम क्यों अनात्त ?
पृथ्वी परमार्थ - निहित, पृथ्वी ही पृथा पार्थ ।
पार्थिव में अर्थ - निहित, अर्थ सदा नहीं स्वार्थ । §1§

इसी काव्य संग्रह के अंर्तगत "हरिवंश राय बच्चन" ने भी गधात्मकता की तरफ उनका भी झुकाव देखने को मिलता है, उनकी कई कृतियों में इसे व्यक्त किया है, उनका अन्तिम काव्य संग्रह " जाल समेटा " दिल्ली की मुसीबत" जैसे काव्य संग्रह को पढ़ने पर प्रतीत होता है, इन्होंने बोलचाल की भाषा को काव्य का रूप देने का प्रयास किया है । यथा :-

दिल्ली भी क्या अजीब शहर हैं ।
यहाँ जब मर्त्य मरता है - विशेषकर नेता
तब कहते हैं, वह अमर हो गया -
जैसे कविता मर गई तो अकविता हो गयी
बापूजी मरे तो इसने नारा लगाया,
बापूजी अमर हो गये । §2§

उत्तर छायावादी कवियों ने संवेदना को जितना महत्व दिया, उतना उन्होंने भाषा को नहीं दिया, वे सिर्फ सरल, सपाट, अभिधात्मक भाषा ही काव्य-भाषा हो सकती है, ऐसा सिद्ध करना चाहते थे । वैसे वे अपने मिशन में सफल रहे, क्यों कि यह भाषा जनप्रिय तो हुई किन्तु अधिक समय तक साहित्य के क्षेत्र में टिक न सकी, एक तरफ उत्तर छायावादी कवियों से ज्यादा प्रगतिवादी कवियों ने भाषा की सरलता स्पष्टता, तथा बोलचाल की भाषा को निकट लाने का प्रयास करते हैं, क्यों कि उनका मानना था, कि "भाषा में अत्यधिक मिठास की खोज सामाजिक ह्रास का चिन्ह है, वे चाहते हैं, कि कविता की भाषा "खेत में काम करने वाले

---

1. उत्तरजय - नरेन्द्र शर्मा - पृ0 - 18
2. जाल समेटा - बच्चन - पृ0 - 26

मजदूरों" से लेकर सामान्यजन की वाणी हो, इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए छायावादी कवि पन्त और निराला ने छायावादी काव्य-भाषा से अलग हुए, और उन्होंने जन-भाषा को अपनाया, "सुमित्रानंदन पंत" ने तो "युगवाणी" और "नवदृष्टि"शीर्षक कविता में उद्घोषित करते हुए कहते हैं कि :-

" खुल गये छन्द के बन्ध
प्रास के रजत पाश,
अब गीत मुक्त,
औं युगवाणी बहती अयास । (1)

प्रगतिवादी कविता की शब्दावली का निर्माण तद्भव शब्दों बोल-चाल के शब्दों, उर्दू के शब्दों तथा अंग्रेजी के शब्दों से हुआ है । "सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" की कुकुरमुत्ता, बेला, नये पत्ते, की रचनाओं में तो उर्दू, अंग्रेजी और देशज शब्दावली की भरमार है, इन रचनाओं को जनता की आम बोली के एकदम निकट रखा गया है, कुकुरमुत्ता में उद्धृत कुछ शब्दों से स्पष्ट हो जायेगा । जैसे - खुशनुमा, बुलबुल, बाड़ी, चमन, राहें, टहनियाँ, सरो, आराम गाह, बड़प्पन, मौसम, रोबोदाब बुत्ता, खुशबू, खाद, केपीटालिस्ट, गुलाम, जाड़ा-धाम, औरत, जानिब, तबेले, टट्टू, हस्ती, पोच, हरामी, खानदानी, डंड, पेलते, बालिश्त, नकली, बकरा, जनखा, पैराशूट, संवाद, मथानी, कैंडा, कलधुगी, बेंडा, पाल, तला, रका, फलसफा, फैलसी, कास्मोपालिटन, मेट्रोपालिटन, लन्ठ, खुशनशीब, उबल, इचता, क्लाइमेक्स, आठोगांठ, चेला, जेवर, टार्च, पिट्टी, किश्ती, कैप, झोपड़ी, अधगड़े, मोरियो, लन्तरानी, खादिम, हमजोली, सिटपिटाई, अडगड़े, लजीज, चढ़ी आँख, दुम्बा, टेरियर, डिक्टेटर, पोयेट, चपाली, कलिया, कबाब, चूल्हा, अर्ज, मंजूर इत्यादि शब्दों का आगमन हुआ । (2)

"युगान्त", "युगवाणी" और "ग्राम्या" की बहुत सी कविताओं की भाषा गद्यात्मक है, वैसे प्रगतिवादी कवियों की भाषा व्याकरण की दृष्टि से योग्य नहीं है, इनमें बहुत सी गलतियाँ दृष्टिगोचर होती है, किन्तु उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी, कि उन्होंने व्याकरण की उपेक्षाकर के जन-भाषा को अधिक महत्त्व दिया, "सुमित्रा नंदन पंत" ने मध्य वर्ग" की विशेषताओं का वर्णन करने वाली निम्नांकित पंक्तियों में शब्द और अर्थ का स्थिर, स्थूल, सम्बन्ध को व्यक्त किया है।

1. चिदम्बरा - सुमित्रानन्दन पंत - पृ0 - 39
2. कुकुरमुत्ता - सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" पृ0 - 33 की भूमिका ।

एक उद्धरण देखिए :-

संस्कृति का वह दास: विविध विश्वास विधायक
निखिल ज्ञान, विज्ञान, नीतियों का उन्नायक ।
उच्च वर्ग की सुविधा का शास्त्रोक्त प्रचारक,
प्रभु सेवक, जन वंचक वह, निज वर्ग प्रतारक । §1§

प्रगतिवादी कवियों में "पन्त" ने जैसा गद्यात्मक, पद्य लिखा है, वैसा दूसरे किसी कवि ने नहीं लिखा है, अभिधा कई तरह से प्रगतिवादी कविता में काव्यात्मक बन गई है, इन प्रकारों में सबसे उत्तम प्रकार है ओज का । एक उद्धरण देखिए :-

" यह इस युग के संघर्षों का सबसे प्रबल प्रतीक है,
लाल फौज ने लाल खून से आज बनाई लीक है,
इस जागृति के स्वर में जन-जन कण-कण आज शरीक है
दस हफ्ते दस साल हो गये अभी मास्को दूर है । " §2§

अन्तर्प्रवाही भावनाओं को सहृदय में जागृत करने में जहाँ-जहाँ प्रगतिवादी कवि सफल हुए हैं, वहाँ-वहाँ अभिधात्मक भाषा-काव्य-भाषा बनने में सफल रही है, चाहे वे भावनाएँ उत्साह, करुणा, आक्रोश, घृणा, रति आदि किसी भी प्रकार की रही हो, इस प्रकार सीधी-सादी भाषा में से काव्यात्मक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए प्रगतिवादी कवियों ने व्यंग्य का सबसे अधिक उपयोग किया है । भारतेन्दु युग के पश्चात् सपाटबयानी भाषा का व्यंग्यात्मक प्रयोग अधिकांश प्रगतिवादियों कवियों ने किया है । "सूर्यकान्त त्रिपाठी" निराला" की कुकुरमुत्ता तथा "नये पत्ते" की कविताएँ भाषा के व्यंग्यात्मक प्रयोग की सर्वोत्तम उदाहरण है, बोलचाल की भाषा वाले शब्द या वाक्य के प्रयोग से किस तरह अर्थदीप्त हो उठते हैं । "निराला" की निम्नांकित पंक्तियों को पढ़कर जाना जा सकता है, एक उद्धरण देखें :-

" मेरे नये मित्र हैं श्रीयुत गिडवानी जी,
बहुत बड़े सोशयलिस्ट,
"मास्को डायेलाग्स" लेकर आये हैं, मिलने ।
मुस्कराकर कहा "यह मास्को डायेलाग्स है,
सुभाष बाबू ने इसे जेल में मंगवाया था,
भेंट किया था, मुझ को "जब थे पहाड़ पर ।
"छ्यू तक, मुश्किल से पिछड़े इस मुल्क में
दो प्रतियां आई थी । "

---

1. चिदम्बरा - सुमित्रानंदन पंत - पृ0 - 51
2. आधुनिक हिन्दी काव्य - भाषा - डॉ0 राम कुमार सिंह - पृ0 - 703

फिर कहा, "वक्त नहीं मिलता है,
बड़े भाई साहब का बंगला बन रहा है,
देख भाल करता हूँ । " ǁ1ǁ

उक्त काव्य "मास्को डायेलाग्स" के "सुभाष बाबू" द्वारा 1935 में भेंट किये जाने तथा " सोशयलिस्ट" गिड़वानी के बड़े भाई के बनते बंगले की देखभाल करने के परस्पर – विरोधी तथ्यों के उल्लेख मात्र से सीधे-सादे शब्द बहुत व्यंजक हो उठते हैं, "मुश्किल से पिछड़े इस मुल्क में वाक्यांश में "मुश्किल" शब्द की विशेष – व्यंजना का पता हमें तब चलता है, जब कविता के अन्त में गिडवानी जी द्वारा लिखित उपन्यास की भाषा का नमूना देखते हैं – "पृय असने हमयी स्याभा मुझे प्रेम है ।" ǁ2ǁ

प्रगतिवादी कवियों ने काव्य-भाषा को जन-भाषा का स्वरूप देने के लिए उन्होंने मुहावरों का भी प्रयोग किया है, "सुमित्रानन्दन पन्त" के काव्य "पल्लव" नामक रचना में उन्होंने "मुहावरों" का प्रयोग किया है, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" खैर, पैर की जूती जोरू, न सही एक, दूसरी आती,
पर जवान लड़के की सुध कर, सांप लोटते फटती छाती । ǁ3ǁ

मुहावरों का प्रयोग सबसे अधिक प्रगतिवादी काव्य-भाषा में हुआ, प्रगतिवादी काव्य-भाषा आधुनिक हिन्दी काव्य-भाषा का एक महत्त्वपूर्ण सीढ़ी है, इसने काव्य-भाषा को न केवल शब्दावली ही प्रदान की बल्कि उसे जनभाषा का एक नया आयाम प्रदान किया, छायावाद और प्रयोगवाद इन दोनों संधिकाल की भाषा की अभिधात्मकता, प्रासादिकता और जन-भाषा के निकट का वर्ष रहा, जिसमें काव्य-भाषा का लगातार विकास हुआ, इसके बीच के अन्तराल के बाद कवियों की जो नयी – पीढ़ी आयी, उसने यह महसूस किया, कि जिन अनुभूतियों के सहारे वह कविता को व्यक्त करना चाहता था, उसे सही ढ़ंग से व्यक्त करने के लिए पर्याप्त काव्य-भाषा नहीं थी, क्यों कि सम्पूर्ण मानव जाति का जीवन दिन-प्रतिदिन जटिल हो रहा था, इसी कारण कवियों में भी जटिलता आ रही थी, कविता में वे जिस

---

1. नये पत्ते – निराला – पृ0 – 25
2. –वही– पृ0 – 26
3. ग्राम्या – सुमित्रानंदन पंत – पृ0 – 26

अनुभूति और विचार को व्यक्त करना चाहते थे, उसे व्यक्त करने के लिए उनके पास सामान्यीकृत और सरलीकृत अनुभूति नहीं है, किन्तु वह वैयक्तिक, विशिष्ट और जटिल अनुभूति थी, इसे व्यक्त करने के लिए ऐसी ही जटिल काव्य - भाषा आवश्यक थी, यह प्रयोगवादी और नये कवियों की पीढ़ी थी, जो सन् 1940 के आस-पास कविता के क्षेत्र में पनप रही थी, जिसके कारण सन्- 1943 में "तार सप्तक" के नाम से हिन्दी कविता का एक नया युग प्रारम्भ हुआ, जिसमें वैयक्तिकता और विशिष्टता पर अधिक बल दे रहे थे, इस बात से साफ जाहिर हो रहा था, कि इन दिनों भारतीय समाज पूँजीवादी अर्थव्यवस्था, मध्यवर्ग तथा व्यक्तिवादिता के क्षेत्र में काफी विकास कर चुका था, इस आन्दोलन ने कविता के विचार तत्व, जीवन की वस्तु-चेतना, और यथार्थ की अभिव्यक्ति पर बल न देकर उन्होंने कविता के शिल्प पर बल दिया, इस युग के कवियों ने यह तय कर लिया कि यह युग प्रयोग का है, और कविता में अपनी बात को सही ढ़ंग से व्यक्त करने का समय है ।

साठोत्तरी की भाषा को सामान्य स्वरूप देने में अज्ञेय, गिरिजा कुमार माथुर, मुक्तिबोध, भवानी प्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय, धर्मवीर भारती, कुंवर नारायण, विजय देव नारायण साही, आदि कवियों ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है ।

साठोत्तरी कविता में उर्दू शब्दों के अलावा अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग खूब हुआ है, " भारत भूषण अग्रवाल " की कविता संग्रह "अनुपस्थित लोग" (1965) में प्लास्टिसीन, मैंटिल बार्ड, कॉलिज, क्लास, इम्पौर्टेन्ट, डॉक्टर, हाई ब्लड-प्रैशर, लैक्ट-राइट, नोटिंग, रिटाइप, फुटबोर्ड, मुगल गार्डेन्स, आउटडोर वार्ड, क्यू, कापी ऐफिशियेन्सीबार, जीनियस, ट्रैफिक, बस स्टैन्ड, बेनिटी बैग, फाइल, सिनेमा, टिकिट, औक्युपाई, अपील, ड्राफ्ट, रेस्त्रां, बैंड, बैंक, वैयरे, वेटर, वॉस, कामरेड, जर्नलीस्ट, वी-आई-पी- प्रेसकान्फ्रैन्स, प्रोफैसर, टैक्स्ट, बुक, कमिटी, बिजनैसमैन, इन्कमटैक्स, सेलटैक्स, टेबिल, कैलेन्डर, फौरेन एन्ड, गाइडेड मिसाइल, प्रौटौकोल, कॉफीहाउस, साइरन, मील, मिल्क-सप्लाई, बूथ, लेट, होकर, डेलीपेपर, मिनट, डार्लिंग, नियोन साइन, रेडियो, डिनर, पेपर बैक, लाइट, माइक, फैक्ट्री, मशीन, स्टिल, चित्र टेलीफोन, टेलीग्राम, टेलीफोनिक, ट्रान्सफर, आदि अंग्रेजी शब्दों के

माध्यम से आये यूरोपीय शब्दों की भरमार है, अंग्रेजी शब्दों के शुद्ध उच्चारण अब कविता में अधिक होने लगा है । इससे भाषा के क्षेत्र में थोड़ी संकीर्णता आ गई है, किन्तु फिर भी नयी कविता अंग्रेजी से अधिक प्रभावित हुई, अंग्रेजी तथा फ्रांसीसी कविता ने न केवल शब्दावली के स्तर पर बल्कि भावबोध स्तर पर भी उसे प्रभावित किया है ।

"तार सप्तक" और "दूसरा सप्तक" की भूमिकाओं एवं कवियों के व्यक्तिगत वक्तव्यों में यूरोप और अमरीका में प्रकाशित नये कविता संग्रहों की भूमिकाओं के वाक्यों तथा कविताओं के अनुवाद तक मौलिक वक्तव्यों एवं कविताओं के रूप में प्रस्तुत किये हैं, दो उद्धरण दृष्टव्य है ।

1. अमरीका की प्रयोगवादी कविताओं के संग्रह "स्पीअर हेड" (भाले की नोंक) की भूमिका में लिखा था -

" न्यू ईडियम्स ऐन्ड न्यू मीटरिक्स हिच
उड कैल्चर इनरेवूलुशनरी वेज द फीलिंग एन्ड
मीनिंग ऑव् लाइफ । "

प्रभाकर माचवे ने अपने "वक्तव्य" में जैसे इसी को अनुगुंजित किया - "जन - जीवन की निकटता के लिए मुहावरेदार - भाषा के नये - शब्द - रूपों, नये छन्दों का ग्रहण ..... ।

मार्च 1955 के "एनकाउन्टर" में "ऐलन" रिडेन की एक अंग्रेजी कविता छपी, एक उद्धरण देखिए :-

फिश इन द बोल हैज नो डेत्थ ऐट आल
टु माई आइज ऐट दिस ऐंगल
ऐन्ड ऊविन हेड ऑन
क्यूरिअसली दे फ्लैटन
देमसेल्ब्ज अगैंस्ट ग्लास अगैंस्ट आइज
अगैंस्ट द वर्ल्ड फेंस्ड
राउन्ड दे आर, यट नॉट
राउन्ड बट फ्लैट
दे आर
दे आर । (1)

---

1. साहित्य - समीक्षा - मुद्राराक्षस - पृ0 - 102 तथा "प्रयोगवाद की प्रेरणा शीर्षक का पूरा लेख ।

"मछली" को लेकर "अज्ञेय" ने भी एक कविता लिखी - एक उद्धरण देखें:-

हम निहारते रूप
काँच के पीछे
हाँफ रही है मछली
रूप - तृषा भी
(और काँच के पीछे) है जिजीविषा । (1)

अंग्रेजी शब्दावली के प्रयोग की एक - दूसरी अति, सम्भवतः इलियट की "वेस्टलैन्ड" कविता के प्रभाव वश, अंग्रेजी के पूरे - पूरे वाक्यों का प्रयोग है जैसे :-

.... टिक् - टिक्
.... टिक् - टिक्
ओह ! लेट मी स्पीक ----
× × × × ×
(मेरा कैत्सटन का टीन)
इन द लास्ट राइड टुगेदर
सेज ब्राउनिंग .....
नीबू नहीं, नीबू नहीं, नहीं डार्लिंग .... । (2)

छठें दशक की समाप्ति होते - होते नयी कविता में एक नया मोड़ आया, जिसमें ऐसा लगा, कि नयी कविता रूढ़िग्रस्त भाषा के स्तर पर पहुँच गई है, क्यों उसमें कुछ नयापन, परिवर्तन, दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था, उसकी प्रयोग-शीलता की प्रवृत्ति बासीपन, अर्जित व्यवस्था एवं रीत्यात्मकता में बदल चुकी थी, सातवें दशक के प्रारम्भ में जिन कवियों ने कविता लिखना प्रारम्भ किया, उन्होंने बदलते हुए समय के अनुसार अपनी संवेदना को व्यक्त करने के लिए नये प्रकार की भाषा को उठाया, "जगदीश चतुर्वेदी" की निम्नलिखित पंक्तियाँ - "प्रारम्भ" (1963) में उनकी पहली कविता की पंक्तियाँ है, एक उद्धरण देखिए :-

नगर में शोर है
विषैला धुआं आंखों से निकल रहा है,
सभी मर्द घिनौने कछुओं - से पहने हुए हैं खोल
केकड़े - सी सिमटी जा रही हैं रतिक्लान्त युवतियां
बुझे बल्बों की कतार - सी टिड्डियों की टोली
नपुंसकों का हुजूम । (3)

---

1. अज्ञेय और नवरहस्यवाद - राम विलास शर्मा - धर्मयुग - । फरवरी 1970-पृ0-20
2. नकेन - पृ0 - 111 -112
3. "क ख ग"-जगदीश चतुर्वेदी - पृ0- 57

सातवें दशक के उत्तरार्द्ध में धूमिल ने लिखा था, कि "कविता- भाषा में आदमी ✓ होने की तमीज है" उनका इशारा मनुष्य के सामर्थ्य की उन अनन्त सम्भावनाओं को पहचानता था, जिनकी रचना विरोधी शक्तियों द्वारा अलग-अलग किया जा रहा है, भाषा और काव्य मनुष्य की नियति के इस रिश्ते को पहचान उस उत्तरदायित्व में निहित थी, जो अपनी समकालीनता में एक गहरी हिस्सेदारी से ही सम्भव होता है, यह ऐसा समय था, हिन्दी जगत की समकालीन कविता के लिए, एक बिल्कुल नयी भूमि तैयार हो रही थी, परन्तु बिडम्बना की बात यह थी, कि एक रचनाकार के चारों ओर का परिवेश जिस तेज गति से बदल रहा था, उसकी सेंसटिविलिटी" में उतनी तेजी से गुणात्मक परिवर्तन नहीं हो रहा था, यह नये रचनाकारों के लिए एक चुनौती थी, वह समाज के बहुसंख्यक समुदाय के अन्तबर्हिा जीवन की ठोस सच्चाईयों और उनके उलझे हुए रूपों की पहचान के लिए अपने रचनात्मक औजारों को उसी के अनुकूल तैयार करता ।

किन्तु उन्ही दिनों "रघुवीर सहाय" ने "आत्महत्या के विरूद्ध" श्रीकान्त वर्मा की "माया दर्पण" कैलाश वाजपेयी ने संक्रान्त जैसी कविताओं की रचना हुई, इन काव्यों में नये शब्द, नयी प्रकार की भाषा, और नयी संवेदना को बल मिला, वैसे इनकी भाषा में नंगी भाषा है, सन् 1965 में "लक्ष्मीकान्त वर्मा" ने नयी कविता को त्याग कर, ऐसी ही कुछ कविताओं की रचना को, जिसमें, नंगापन अधिक था, "ताजी कविता" में जिस भाषा की खोज थी, वह न होकर आवरणहीन, सज्जाहीन, संस्कारहीन, इन सब से अधिक ऐसा नंगापन जिसमें आभिजात्य जंगलीपन के अमर एक समय बोध को छाप सके ।

सन् 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण किया, जिसमें हमारी पराजय हुई, इस हार ने हमारे सामने प्रश्न चिन्ह लगा दिया, 1947 से लेकर 1962 तक के इतिहास में भारत की जो सच्चाई थी, वह खुलकर सामने आ गई, जो शब्द इस प्रभा मंडल में आवृत्त थे, जो "रागात्मक ऐश्वर्य में धुले हुए थे, जो आदर्शवादिता से आबद्ध थे, बिल्कुल निरर्थक सा प्रतीत होने लगे, इस युग की युवा पीढ़ी कवियों ने इन शब्द जालों को छोड़कर, ऐसे शब्दों का चयन किया, जिसमें नंगापन तिरस्कृत अश्लील घृणास्पद और उट-पटांग की विशेषताओं से परिपूर्ण थे ।

साठोत्तर कविता ने काव्यात्मक - अकाव्यात्मक श्लील, अश्लील, मधुर, कठोर, तिरस्कृत, अपरिष्कृत जैसे शब्दों का भेद समाप्त हो गया, शब्दों का प्रयोग करते समय ध्वनिगत लालित्य, उसकी कोमल चित्रात्मकता, और अर्थगत रहस्यात्मकता, अभिजात, संस्कार शीलता काध्यान न रखते हुए इस समय के कवियों ने इस ओर ध्यान दिया है, कि जिन शब्दों का प्रयोग करना है, उनकी आक्रामक शक्ति कितनी है, वे पाठक को किस हद तक आघात दे पाते हैं, और जीवन की सच्ची और नग्न वास्तविकता को किस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं, "सौमित्र मोहन" की लिखी निम्नांकित पंक्तियाँ आघात पहुँचाती है, और जीवन की विसंगतियों तथा ऊल - जलूपन को भी व्यक्त करती है । एक उद्धरण देखिए :-

" औरत के पेट की सीवन उधेड़कर उसने गर्भ-जल से अपना
शिश्न धोया और बन्द कमरे में घुटती सांस से कुछ मंत्र
पढ़ने लगा या कोई वसीयत किसी की संतुष्टि के लिए
ऐसा अक्सर होता है, जब चीजें स्थान्तरित हो जाती हैं
और बारिश सूखती हुई कमीजों की जेबों में
होने लगती है या पांवों में कुर्सी उग जाती है
या होठों की जगह सलवटें पड़ा क्रेप कागज । §1§

व्यंग्यात्मकता तो साठोत्तरी हिन्दी काव्य - भाषा का मुख्य स्वर रहा है, "रघुवीर सहाय की कविता " " . गिरीश की मृत्यु " इसका ज्वलन्त उदाहरण है, वैसे साठोत्तरी कविता की भाषा में भी जटिलता है, किन्तु भाषा के अर्थ को जटिल बनाती है, फिर भी जितना अमूर्तन, अन्यथाकरण मुक्त आसंग, फ्तान्सी आदि के शिल्प का प्रयोग अधिकतर साठोत्तरी हिन्दी काव्य में हुआ है, इतना पहले कभी नहीं हुआ था, इस काल के दरम्यान प्रमुख कवियों की मुख्य कृतियों का योगदान रहा, "सौमित्र मोहन" की लुकमान अली" "राजकमल चौधरी" की "मुक्ति प्रसंग" "दुधनाथ सिंह" की "सुरंग" से लौटते हुए "मणिमधुर को "खन्ड-खन्ड पाखन्ड पर्व" श्रीकान्त वर्मा की "जलसा घर" "बलदेव वंशी" की "उपनगर में वापसी" इन कविताओं में कठिन शिल्पों के प्रयोग के कारण काव्य-भाषा सपाट नहीं रह गई है ।

---

1. चाकू से खेलते हुए - सौमित्र मोहन - §पहचान दो -12§ पृ0 - 7

इसके साथ ही कुछ कवितायें, पौराणिक आख्यानों को केन्द्र में रख कर मिथकीय प्रयोग हुए, जिसमें "धर्मवीर भारती" का "अन्धायुग" जगदीश गुप्त की "शम्बूक" नरेश मेहता की "संशय की एक रात" किशोर काबरा की "उत्तर रामायण" महा प्रस्थान (नरेश मेहता) ऐसी कई रचनायें, लिखी गई ।

" सातवें दशक के उत्तरार्द्ध में कवि की जबावदारी एक अलग तरह की थी, उसे एक हाथ से पूर्ववर्ती जंगल काटना था, और दूसरे हाथ से ताबड़तोड़ नया कथ्य, नयी भाषा, व्यंजना, शैली और तेवर रोपने थे, स्वाभाविक था, कि उसके भीतर एक अलग तरह की उतावली थी, जिससे उसके विचार और बोध प्रभावित हो रहे थे । " (1)

यह बड़े ही दु:ख की बात थी, कि कविता के क्षेत्र में सारी कविता "मैं" और "तुम" शैली में लिखी जा रही थी, जहाँ "मैं" का अर्थ "जनता" और "तुम" का अर्थ व्यवस्था और तंत्र था । "एक ही भाव विचार उस समय की हर कविता में है, एक निश्चित राजनीतिक सूत्र का वे हर कविता में अनुवाद करते चलते हैं, अनुवाद भी बहुत निम्न कोटि का । यदि वे जन-जीवन को जानते तो उनकी भाषा में बनावट नहीं होती । " (2)

आज की मानव-स्थिति से क्रूर और निर्मम साक्षात्कार करने के बाद कवि को ऐसा लगता है, कि इसके पहले की काव्य - भाषा आज के अनुभवों को लिपिबद्ध करने में असमर्थ है । इसमें संदेह नहीं की नयी कविता की भाषा प्रारम्भ में परिवेश के अनुकूल तीव्र और जीवन्त थी, उसमें चौकाने वाले मुहावरे नहीं के बराबर थे, लेकिन धीरे-धीरे नयी कविता की भाषा ठन्डी, एकरस और निर्जीव हो चली, बदलती हुई काव्य-संवेदना को अभिव्यक्त करने की क्षमता उसमें न रहीं, "भाषा की सार्थकता इस बात में है, कि वह कवि की अपनी संवेदना के साथ कितनी जुड़ चुकी है, । "(3)

अज्ञेय की सन् 60 के बाद की रचनाओं में अनुभव और भाषा के अन्तराल को साफ देखा जा सकता है, और इसके आधार पर नयी- कविता की भाषिक विसंगति को समझा जा सकता है । "श्री राम वर्मा ने स्वतंत्रता के बाद जिस काव्य-भाषा के स्थगित होने या नारों की ओंट में खोनें की चर्चा की है ।

---

1. दस्तावेज - प्रभाकर क्षेत्रिय - पृ0 - 224
2. कविता की तलाश - डॉ0 चन्द्रकान्त बांदिवडेकर - पृ0 - 72
3. आज का हिन्दी साहित्य - संवेदना और दृष्टि- डॉ0 राम दरश मिश्र-पृ0-4।

एक उद्धरण देखें :-

स्वतंत्रता के बाद पूरी जाति स्वार्थलिप्सु,
इच्छानुकूलित और प्रेम साधन विनष्ट होती गई,
वैसे ही भाषा या तो स्थगित होती गई,
या नारों की ओट में खोती गई । §1§

युवा कवियों ने भाषा की अक्षमता को जल्दी ही पकड़ लिया, केदार नाथ सिंह का कथन है :-

" भाषा जो मैं बोलना चाहता हूँ/मेरी जिह्वा पर नहीं /
बल्कि दाँतों के बीच की जगहों में सटी हुई है । । §2§

साठोत्तरी कवि जनता का आदमी है, इसलिए जनता से जुड़ना उसके लिए अनिवार्य कर्म बन गया है । कवि जिस सीमा तक सामान्य भाषा के खुलेपन से विस्तार से, सच्ची जिन्दगी की समस्याओं, सरोकारों से परिचित होगा, उतना ही वह अपनी भाषा अर्थात् काव्य - भाषा को जिन्दगी के निकट लाते हुए सार्थक या सक्षम बना सकेगा । §3§

रघुवीर सहाय ने "आत्महत्या के विरुद्ध" संग्रह में भारतीय राजनीति तथा मनुष्य की विसंगतियों को उधेड़ा है । उनका दूसरा संग्रह "हँसो - हँसो जल्दी हँसो " में वे जनभाषा के बिल्कुल सामान्य बोलचाल के रूप में मानवीय संवेदनाओं को उभारते हैं । सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की "गर्म हवाएँ" "कुआनो"नदी" में भी भाषा, जनभाषा के स्तर पर प्रयुक्त हुई है । "नागार्जुन" तथा "त्रिलोचन" में भी जन-भाषा के सही प्रयोग के उदाहरण मिलते हैं । जनभाषा के प्रयोग में आवश्यक है कि शब्द थोपा हुआ तथा कृत्रिम न लगे । ज्ञानेन्द्र पति की कविता "हड़ताल से आगे" से यह बात स्पष्ट हो जाती है ।

मैंने देखा रामेसर चुप था, उसे एक बगल खींच
धीरे पूछा : क्यों गुम काहे हो ? रामेसर बोला : भाय
हड़ताल हाड़ तोड़ हो गया है कल तो किसी तरह काम चला पर
आज भोरे से किसी के मुँह में सत्तू तक नहीं गया है

---

1. पहचान - 5 पृ0 - 7
2. कविताएँ - 1964 - सम्पादक- अजित कुमार - विश्वनाथ त्रिपाठी -फर्क नहीं पड़ता - पृ0 - 45 - 46
3. कवि-कर्म और काव्य-भाषा - परमानन्द श्रीवास्तव - पृ0 - 2

हम तो ठहरे लूटो लावो कूटो खावो
उमर से हड़ताल दू - दू दिन और क्या कल भी
तैस में रामेसर की आवाज तेज हो गयी : हम तो
भाय अन्त तक लड़ सकते हैं पर सब मनमौजी है
पिछली बार हड़ताल खट्ट से तोड़ दिया और क्या हुआ
कुछ नहीं "बात साफ है रिक्खा - डिलेवरों का झंडा
कार - वालों के हाथ में रहेगा तो सब कुछ मनमौजी रहेगा । §1§

कहीं - कहीं पर जनभाषा का प्रयोग करना चाहते हुए भी कवि उतनी सफलता नहीं पा सका है, जितनी उससे अपेक्षा की जाती है ।जनकवि कहे जाने वाले "विजेन्द्र" और "आलोक धन्वा" की कुछ कवितायें इसका प्रमाण है । विजेन्द्र की कविता "जनशक्ति" जन-भाषा के नाम पर तत्सम शब्दों की बहुलता से बोझिल हो जाती है, तो आलोक धन्वा की कविता "जनता का आदमी" और "गोली दागो पोस्टर" में कविता की भाषा तथा शिल्प "जन" से दूर जाकर चौंकाने वाला स्वरूप धारण कर लेता है । एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

यह उन्नीस सौ बहत्तर की बीस अप्रैल या
किसी पेशेवर हत्यारे का दायाँ हाथ या किसी जासूस
का चमड़े का दस्ताना या किसी हमलावर की दूरबीन
पर टिका हुआ धब्बा है । §2§

धूमिल मौजूदा सामाजिक और मानसिक अव्यवस्था को जंगल के रूप में देखते थे, अपनी लम्बी "पटकथा" में देश को एक विशाल दलदल के किनारे पड़ा अधमरा पशु कहकर देश की गरीबी, अभाव और साम्प्रदायिक संबंध आदि की ओर एक साथ ही संकेत कर दिया है :-

लेकिन मुझे लगा कि एक विशाल दलदल के किनारे
बहुत बड़ा अधमरा पशु पड़ा हुआ है
उसकी नाभि में एक सड़ा हुआ घाव है
जिससे लगातार - भयानक बदबूदार मवाद
बह रहा है
उसमें जाति और धर्म और सम्प्रदाय और
पेशा और पूँजी के असंख्य कीड़े
बिल बिला रहे हैं । §3§

---

1. आलोचना-जुलाई-दिसम्बर- 1975 पृ0- 137 से उद्धृत
2. ब्राम-3,1974 गोली दागो पोस्टर -पृ0 - 14
3. संसद से सड़क तक -पटकथा - धूमि-पृ0 - 130

साठोत्तरी कविता की सूक्तियाँ जीवन के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित हैं, कभी वे नारी और पुरुष की सम्बद्धता का आधार ढूँढ़ती हैं, तो कभी वर्तमान जीवन के व्यस्त और गतिशील जीवन का भविष्य पढ़ती है । एक उद्धरण देखें :-

" पुरुष को स्त्री अपनी यौनि से नहीं
गर्भ से बाँधती है । " ⁅1⁆

साठोत्तरी कविताएँ सीधी और सपाट कथन भंगिमा से लैस न होकर उक्ति वैचित्र्य और लाक्षणिकता से सम्पन्न हैं । ऐसी कविताओं की भाषा अपेक्षाकृत स्तरीय और काव्यमयी है, इस प्रकार को भाषा मानव नियति के विभिन्न परिदृश्यों को उकेरने में उतना ही सक्षम सिद्ध हुई है, जितनी साफगोई और सपाट बयानी से युक्त काव्य-भाषा, ऐसी भाषा में एक और नये और ताजे विशेषणों से युक्त संज्ञायें दी गई है, एक उद्धरण देखें :-

" पैदल लाचारियाँ
हाँफती हैं नसीबों के दलदल में
बलती करुण आँखें । ⁅2⁆

भाषा को शक्तिपूर्ण और तर्कपूर्ण बनाने के लिए युवा कवियों ने लोकोक्तियाँ और मुहावरों का भी प्रयोग किया है, वैसे ऐसे स्थान साठोत्तरी कविता में बहुत कम है - कवि भवानी प्रसाद मिश्र की निम्न पंक्तियों में इसका आभास देखने को मिलता है :-

कितना नाचा हूँ तुम्हारे इशारों पर
नौ मन तेल तक जुटाया है मैंने
खुद अपने ही लिए । ⁅3⁆

लीलाधर जगूडी ने भी मुहावरों का प्रयोग अपनी कविता में किया है, उनकी कविता "घर संभालते हुए" की उक्त पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं ।

" उसे सही ढंग से पहचानते हुए टोको
थोड़ा सा आँखों को लाल-पीली करो
तुम आदमी नहीं पजामा हो,

---

1. कल्पना -जनवरी-1973-तलहटी संलाप, "अमृताभारती"- पृ0 - 26
2. विचार कविता की भूमिका - रैन बसेरा - पृ0 - 105
3. अँधेरी कविताएँ - शरीर और सपने - पृ0 - 45

किधर से कहाँ आ रहे हो
बहुत टेड़े हो बिल्कुल सीधे चले जा रहे हो
अगर काम बनाना है
तो अंटी ढीली करो । §1§

बलदेव वंशी ने भी विद्रोह की मुद्रा में पुराने मुहावरे को नयी अर्थवत्ता देने का प्रयास किया है "हाथ धोना" की निम्न पंक्तियों में देखा जा सकता है:-

इन मैल - भरी भरती रेखाओ में
तुम्हारा भविष्य कहीं खो गया है
तुम हाथ क्यों नहीं धोते । §2§

जहाँ कवियों ने जन-भाषा का प्रयोग किया है, वहाँ भाषा को अनावश्यक आक्रामक होने से बचाया गया है, अनुभव को सीधे, सशक्त तथा संयत ढ़ंग से कहने की रणनीति बहुत से समर्थ कवियों द्वारा अपनाई गई है । "मन मोहन" की कविता "रेलगाड़ी" से इस बात की पुष्टि हो जाती है, कवि ने सहज भाषा में व्यंग्य को उभारते हुए अपनी बात को सशक्त ढ़ंग से कहा है :-

इंजन फक फक करता है । धुआँ छोड़ता है, चलता नहीं ।
गाड़ी के पहिए जाम है, पटरी पर सरकना भी नहीं चाहते ।
ड्राइवर सो कर उठता है । उठकर सो जाता है । तेवर बदलता
है । कमीज । बदलता है, इंजन बदलता है, गार्ड तेजी से
हरी झंडी दिखाता है। नतीजा कुछ भी नहीं निकलता ।
यात्री डिब्बे से बाहर झांकते हैं । फिर उतर पड़ते हैं ।
फिर कुछ ही देर बाद । गाली बुदबुदाते चढ़ आते हैं ।
नतीजा कुछ भी नहीं निकलता । गाड़ी के पहिये जाम हैं और ।
इंजन फक-फक करता है । धुआँ छोड़ता है, चलता नहीं । §3§

इस कविता में रेलगाड़ी पूरी कौम का प्रतीक है, जाम पहिए, धुआँ छोड़ता इंजन उसका फक-फक रह जाना राष्ट्रीय प्रशासन तथा प्रगति का व्यंग्यात्मक परन्तु नग्न प्रेक्षण है । ड्राइवर की मनःस्थिति भारतीय कर्णधारों की ओर संकेत करती है, गाड़ी के डिब्बे के यात्री सम्पूर्ण जनमानस का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

---

1. नाटक जारी है - टेलीफोन पर, पृ0 - 95
2. दस्तक दीवार से - पृ0 - 89
3. बाम - 2 जुलाई 1972 पृ0 - 105

रचना का अन्त हल्के तमाचे के साथ होता है । इस तरह कवि भाषा के संयत तथा शालीन होते हुए भी वह सब कहने में सक्षम रहा है, जो उसे कहना है, सम्प्रेक्षण क्षमता इस कविता में आदि से अन्त तक है ।

अभिव्यंजना शिल्प : बनाम भाषा की अर्थवत्ता :

अभिव्यंजना शिल्प एक युग्म शब्द है, जिसमें "अभिव्यंजना" और "शिल्प" अलग - अलग अपना स्वतंत्र रूप एवं अर्थ रखने वाले दो शब्द भी हैं, और एक युग्म के रूप में एक समवेत रूप एवं अर्थ प्रकट करने वाला एक शब्द भी, "अभिव्यंजना" और शिल्प हमारी भाषा के अपने प्राचीन शब्द है, और आज इनके साथ इनके प्राचीन अर्थ के साथ ही पाश्चात्य सम्पर्क के कारण कुछ नयी अर्थ छायाएँ भी आकार सम्बद्ध हो गयी हैं । "अभिव्यंजना" शब्द अभिव्यंजना का स्त्रीलिंग रूप है । "अभिव्यंजना" शब्द कई अर्थों में प्रयुक्त होता है, कुछ प्रमाणिक शब्द कोशों में अभिव्यंजन एवं अभिव्यंजना के कई अर्थ दिये गये हैं । " (1)

1. अभिव्यंजन - संज्ञा पु0 (सं. अभिव्यंजन) (स्त्री. अभिव्यंजना)
   प्राकट्य । अभिव्यक्ति । प्रकाश । विकास । (2)

   अभिव्यंजना - संज्ञा स्त्री (सं. अभिव्यंजना) मन के भावों का शब्दों में चित्रण या रूप - विधान । (3)

   आधुनिक हिन्दी काव्य में ऐसे कई नये प्रयोग हुए है, एक उद्धरण देखिए -

   1. स्याह लहरों में नहा रही,
      किरनीली मूर्तियाँ
      मेरी ही स्फूर्तियाँ । (4)

   2. दक्षिणी पश्चिम से हहर हहर अरबी सागर
      उद्दाम स्वन, ज्वारित अखन्ड बहती जिस पर । (5)

---

1. आधुनिक हिन्दी कविता का अभिव्यंजना शिल्प - डॉ0 हरदयाल-अपनी भूमिका में - पृ0 - । सरस्वती प्रेस - दिल्ली - इलाहाबाद ।
2. हिन्दी शब्द सागर - प्रथम भाग - पृ0 - 277
3. वही - पृ0 - 277
4. मुक्ति बोध की कविता
5. प्रभाकर माचवे

शर्मीली, लजीली, "खिसली आँख लजीली री" जैसे प्रयोग हुए हैं, नये कवियों ने कहीं - कहीं पुल्लिंग रूप में शब्दों को कहीं - कहीं स्त्रीलिंग शब्दों को प्रयुक्त किया है, एक उद्धरण देखिए :-

3. खड़ी खेत के बीच किसानिन कजरी गायेरी । (1)

कोई तब कहता है

पक्षिणियाँ सचमुच अपार्थिव हैं

यहाँ "किसानिन" और पक्षिणियाँ" "किसान" और "पंक्षी" के स्त्रीलिंग वाची रूप हैं । (2)

2. अभिव्यंजन - संज्ञा पु0 (सं.) (स्त्री. अभिव्यंजना) प्रकट करना । सूचित करना । (3)

3. अभिव्यंजन :- (1) विचारों या भावों को शब्दों या संकेतों के द्वारा ठीक तरह से तथा स्पष्ट रूप से प्रकट करने की क्रिया या भाव ।

2. भाषिक क्षेत्र में कोई बात शब्दों द्वारा बहुत ही सुन्दर ढ़ग से व्यक्त करना। (एक्सप्रेशन, उक्त दोनों अर्थों के लिए) (4)

3. अभिव्यंजन - वह बात जो अभिव्यंजन के रूप में प्रकट की गई है । (5)

4. अभिव्यंजनम् - मैनिफेस्टिंग, रिवीलिंग । (6)

"मानक हिन्दी कोश" में "अभिव्यंजना" का अंग्रेजी पर्यायवाची "एक्सप्रेशन" शब्द दिया है, अभिव्यंजन. या "अभिव्यंजना" शब्द का अंग्रेजी शब्द "एक्सप्रेशन" के हिन्दी रूपान्तर के रूप में प्रचलन सुपरिचित है, आप्टे ने "इंगिलश - संस्कृत कोश" में "एक्सप्रेशन" शब्द का जो अर्थ दिया है, उसे "डॉ0 सावित्री सिन्हा" ने कई भागों में बाँटा है ।

1. "व्यंजना, प्रकाशन, बोधन, ज्ञापन, आविष्करण, ख्यापन, निरूपण, 2. निष्पीड़न, निष्कर्षण 3. बदन, आस्य, आकृति, 4. कथन, वचन, उक्ति, वाक्य, पद, शब्द । 5. रीति,मार्ग, पद्धति, सरणि,।(7)

---

1. भवानी प्रसाद मिश्र
2. नयी कविता -डॉ0 क्रान्ति कुमार - पृ0 - 254-म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3. संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर - पृ0 - 53
4. मानक हिन्दी कोश - पहला खन्ड - पृ0 - 154
5. -वही- पृ0 - 154
6. द प्रैक्टिकल संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी-आप्टे- भाग-1 - पृ0- 184
7. ब्रजभाषा के कृष्णभक्ति काव्य में अभिव्यंजना-शिल्प-डॉ0 सावित्री सिन्हा-पृ0-2

" द शार्टर आक्सफोर्ड "इंग्लिश डिक्शनरी" में "एक्सप्रेशन" शब्द का अर्थ इस प्रकार दिया गया है ।

1. "द एक्शन ऑव रिप्रेजेक्टिंग इनवर्ड्स और सिम्बल्स, अटरेन्स,
2. मैनर ऑर मीन्स ऑव रिप्रिजेन्टिंग इन लैंग्वेज, डिक्शन, एवर्ड,फ्रेज, ए फार्म ऑव स्पीच ।
3. द फैक्ट ऑर वे ऑव एक्सप्रेसिंग करैक्टर, सेन्टीमेन्ट, एक्शन, फीलिंग एटसेटरा इन ए वर्क ओव आर्ट । §1§

अभिव्यंजन या अभिव्यंजना तथा अंग्रेजी पर्यायवाची "एक्सप्रेशन" के उपयुक्त शब्द कोशीय अर्थों से यह स्पष्ट है, कि सामान्य रूप से ये शब्द मनुष्य द्वारा अपने और अपनी अनुभूतियों को बाहर व्यक्त करने के किसी भी क्रिया कलाप या साधन के लिए प्रयोग होता है, फिर भी वह इसे विशेष अर्थ में इन शब्दों का उपयोग किसी कलाकृति की उन विशेषताओं के लिए होता है, जिनके साथ "वाह्य" विशेषण को जोड़ा जाता है, यही विशेष अर्थ कविता के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है, कविता में कवि अपने विचारों और अपने भावों को शब्दों के माध्यम से व्यक्त करता है, शब्द का अर्थ है, श्रवणेन्द्रिय द्वारा गृहीत सामान्य ध्वनि या नाद नहीं, किन्तु अच्छरों का सचेत सर्थक समूहन । इस सम्बन्ध में डॉ0 सावित्री सिन्हा " का कथन दृष्टव्य है :-

" भौतिक उपादानों के जिस संगठन द्वारा कवि अथवा कलाकार अपने अभिप्रेत की अभिव्यक्ति करता है, वही अभिव्यंजना है, इन उपादानों में अन्तःस्थ व्यंजक शक्तियों को संकलित तथा संगठित करके कवि अपनी भावनाओं को आबद्ध करता है, इस संगठन द्वारा आविर्भूत रूपात्मक विन्यास ही कलाकृति का आयाम है, और यही अभिव्यंजना है । " §2§

इसके साथ ही इस सम्बन्ध में एक प्रश्न यह उठता है, कि अगर सचमुच "अभिव्यंजना" शब्द कवि के आन्तरिक अनुभूति की सम्पूर्ण भौतिक या बाह्य अभिव्यक्ति का वाचक है, तो इसके साथ "शिल्प" शब्द का सम्बन्ध क्यों बताया गया है, इस शब्द युग्म का प्रयोग सन्दर्भित अर्थ की सुनिश्चित अवधारणा को व्यक्त करने के लिए किया गया है ।

---

1. द शार्टर ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी - तृतीय संस्करण - पृ0 - 658
2. ब्रजभाषा के कृष्ण भक्ति काव्य में अभिव्यंजना शिल्प - डॉ. सावित्री सिन्हा- पृ0 - 6

"शिल्प शब्द अत्यन्त प्राचीन शब्द है, आरम्भ में इस शब्द का प्रयोग शूद्रों के द्वारा निर्मित जीवनोपयोगी वस्तुओं में प्रयुक्त कुशलता के लिए होता था।"§1§

परन्तु, "कौषीतकी ब्राह्मण" के रचनाकाल तक यह किसी भी प्रकार के कौशल का वाचक हो गया । §2§

इसी तरह शिल्प उपयोगी कौशल के साथ-साथ ललित कौशल का अर्थ भी देने लगा, प्राचीन भारत में शिल्पियों के दो भेद माने गये हैं, जो "कारूशिल्पी" और "चारूशिल्पी" के रूप में जाने जाते हैं । "चारूशिल्प" के लिए "कला" शब्द का प्रयोग किया जाता था, "भरत मुनि" ने अपने "नाट्य शास्त्र" में "शिल्प" और "कला" दोनों शब्दों को अलग-अलग अर्थ में प्रयोग किया है । §3§

"अभिनवगुप्त" के कथानुसार "शिल्प" "माला" चित्र, खिलौने आदि के निर्माण में प्रयुक्त कुशलता के लिए तथा "कला" गीतवाद्यादि में प्रयुक्त कुशलता को व्यक्त करता था । §4§

"धीरे-धीरे" शिल्प शब्द का प्रयोग कम होता चला गया, और इसका स्थान "कला" शब्द ने ले लिया । " §5§

" आधुनिक काल में साहित्यिक विवेचन में "शिल्प" का प्रचलन फिर अधिकाधिक होने लगा है, आज यह शब्द अंग्रेजी के "क्राफ्ट", या "टैक्नीक" के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त होता है । §6§

भारतीय परम्परा के अनुसार "काव्य" "कला" और "शिल्प" तीनों अलग-अलग है । §7§

पश्चिम में काव्य को प्रारम्भ से ही "कला" माना गया है । §8§

"क्राफ्ट" के पर्यायवाची के रूप में "शिल्प" का सामान्य अर्थ है, "स्किल और डैक्सटैरिटी, ए स्किल्ड ट्रेड, कनिंग, आर्टिफिस, ओर गाइल । §9§

---

1. ब्रह्म वैवर्त पुराण - ब्रह्मखन्ड, दशम अध्याय श्लोक -19,20,21,92,93,94
2. पाणिनि कालीन भारतवर्ष - डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल- पृ0 - 223
3. हिन्दी अभिनव भारती-सम्पादक एवं व्याख्याकार-आचार्य-विश्वेश्वर-पृ0213
4. -वही- पृ0- 214
5. रीतिकालीन रीति-कवियों का काव्य-शिल्प-डॉ0 महेन्द्र कुमार - पृ0- 4
6. कवित्री महादेवी वर्मा - शोभनाथ यादव - पृ0 - 203
7. हिन्दी अभिनव भारती - पृ0 - 213
8. अरस्तु का काव्य शास्त्र - भूमिका - डॉ0 नगेन्द्र - पृ0 - 5-6
9. द न्यू नेशनल डिक्शनरी कोलिन्स - पृ0 - 121

इसका अर्थ हस्तकौशल, दस्करी, कारीगरी, प्रवीणता, पटुता, कौशल, दक्षता, छल, धूर्तता, चालाकी,आदि । §1§

"टैक्नीक" के पर्यायवाची के रूप में "शिल्प" का अर्थ होगा - मैनर ऑव आर्टिस्टिक एक्जीक्यूशन और परफार्मेन्स इन रिलेशन टू फॉर्मल ऑर प्रैक्टिकल डिटेल्स, द मैकैनिकल ओर फॉर्मल पार्ट ऑव एन आर्ट, स्पेशियली ऑव एनी ऑव द फाइव आर्ट्स, आल्सो स्किल ऑर एबिलिटी इन दिस डिपार्टमेंट ऑव वन्स आर्ट, मैकेनिकल स्किल इन आर्टिस्टिक वर्क । " §2§

"आप्टे" के कथानुसार "शिल्प" शब्द का प्रयोग चार प्रकार से होता है।

1. एन आर्ट ए फाईन ऑर मैकैनिकल आर्ट ।
2. स्किल §इन एनी आर्ट§ क्राफ्ट ।
3. फार्म शेप ।
4. क्रियेशन, प्रोक्रियेशन के अर्थ में होता है । §3§

हिन्दी शब्द कोशों में "शिल्प"का अर्थ है। हाथ से काम करने का हुनर, दस्तकारी, हस्तकला । §4§

शिल्प, क्राफ्ट, टैक्नीक, शब्दों के अर गहन विचार किया जाय तो यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाती है, कि इनका वास्तविक अर्थ तो दस्तकारी या कारीगरी ही है, जो अधिकांशतः बाह्य होती है । तथा अभ्यास साध्य मानी जाती है ।

श्रेष्ठ काव्य - रचना के लिए "अपूर्व वस्तु निर्माण क्षमा प्रज्ञा प्रतिमा" के साथ - साथ "लोकशास्त्र काव्याद्य वेक्षणात्" अर्जित "निपुणता" तथा "काव्यज्ञ शिक्षयाऽभ्यास" की आवश्यकता को भी आचार्योंने बराबर स्वीकार किया है । §5§

प्रतिभा नैसर्गिक होती है । §6§

इसका सम्बन्ध काव्य की आन्तरिक प्रेरणा से होता है, किन्तु निपुणता, तथा अभ्यास कवि का अर्जित गुण है। "शिल्प" इन्ही अर्जित गुणों को ललित कलाओं के

---

1. बृहत् अंग्रेजी - हिन्दी कोश - डॉ0 हरदेव बाहरी, भाग -1, पृ0 - 431
2. दे शॉर्टर ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी - तृतीय संस्करण -पृ0 - 2140
3. द प्रैक्टिकल संस्कृत - इंग्लिश डिक्शनरी, खन्ड -3, पृ0 - 1554
4. मानक हिन्दी कोश - सम्पादक-रामचन्द्र वर्मा,पांचवां खन्ड- पृ0- 173 एवं संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर - पृ0 - 925
5. काव्य प्रकाश - मम्मट - 1/3
6. काव्यादर्श - दण्डी, 1/103

सन्दर्भ में प्रयुक्त होने पर निर्भर करता है । शिल्प की यही परिभाषा दी गई है ।

"मूलत: इसका प्रयोग उपयोगी कलाओं के निर्माण की क्षमता के लिए होती है, किन्तु उपचार से इसका प्रयोग ललित कलाओं के लिए किया जाता है, यहाँ इससे अभिप्राय है, रचना की दक्षता या निपुणता से । किसी भी उत्कृष्ट रचना में भावों का गाम्भीर्य, विचारों की गरिमा एवं शैली का उत्कर्ष तो पाया ही जाता है, किन्तु साथ ही जब समग्र रूप से उस रचना का मूल्यांकन करते हैं, तो इन सब तत्वों की निजी अवस्थिति एवं इनके विकास का अध्ययन भी करते हैं, और साथ ही इन सभी तत्वों की पारस्परिक सम्बद्ध - समरस योजना एवं निर्वाह का विवेचन भी करते हैं । यह योजना एवं निर्वाह कलाकार की कला - विषयक निपुणता या दक्षता पर निर्भर करता है । इसे ही इस कला का शिल्प कहते हैं । " §1§

अभिव्यंजना शिल्प और तत्व :

सारे संसार के सम्पूर्ण मानव जाति की अभिव्यक्ति के जितने भी साधन हैं, उन सब में सबसे अधिक सबल, नर्म, एवं सुन्दर साधन भाषा है, कविता के लिए भाषा अभिव्यक्ति का सबसे प्रमुख तत्व माना गया है । भाषा-काव्य के कौन-कौन से प्रमुख तत्व हैं, इसका पता तो काव्य की परिभाषा से लगाया जा सकता है, भाषा का विभिन्न रूप में प्रयोग को ही काव्य कहा गया है, जिसे भाषा शास्त्र के प्रमुख आचार्यों ने भी स्वीकार किया है, "आचार्य विश्वनाथ जी" का कथन है कि " वाक्यं रसात्मकं काव्यम्" माना है । §2§

"पंडित जगन्नाथ का कथन है - "रमणीयार्थ प्रति पादक: शब्द: काव्यम्" है । §3§

"कॉलरिज ने कहा है कि "पोयट्री द बेस्ट वर्डस् इन द बेस्ट ऑर्डर, " §कविता उत्तम से उत्तम शब्दों का सर्वोत्तम विधान है ।§§4§

"मलार्मे का मानना है, कि "कविता विचारों से नहीं, शब्दों से बनती है । " §5§

---

1. मानविकी पारिभाषिक कोष - साहित्य खन्ड-सम्पादक-डॉ0 नगेन्द्र- पृ0-61-62
2. साहित्य दर्पण - विश्वनाथ - पृ0 - 19
3. रस गंगाधर का शास्त्रीय अध्ययन - प्रेम स्वरूप गुप्त - पृ0 - 34
4. सिद्धान्त और अध्ययन - डॉ0 बाबू गुलाब राय - पृ0 - 46
5. पोयट्री एन्ड एक्सपीरियन्स - आर्कीबाल्ड मैक्लीश - पृ0 - 23

"आई. ए. रिचर्ड्स् का कथन है कि "कविता भाषा का सवेगात्मक प्रयोग है । " §1§ §इमोटिव यूज§

कविता की इन परिभाषाओं में "शब्द" या "भाषा" पर इतना जोर देने पर यह साफ जाहिर हो गया है, कि भाषा काव्य का सबसे प्रमुख तत्त्व है और कविता की भाषा आम भाषा से अलग होती है, सामान्य भाषा या कविता की भाषा " सांदर्भिक" या "जाति" सकेतवाचक होती है, और काव्य-भाषा हममें सवेंगात्मक प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है, इसलिए वह जाति सकेत वाले शब्दों की अपेक्षा विशेष रूप व्यापार सूचक "शब्द" अधिक प्रयोग में लाती है । §2§

इस सम्बन्ध में भारतीय काव्य शास्त्रियों ने अनेक शब्द शक्तियों की खोजबीन की, और इस विशिष्टता तक पहुँचने के लिए अभिव्यंजना शिल्प के वे तत्त्व सामने आने लगे, जिन्हे बिम्ब और प्रतीक माना जाता है, जो मूर्ति विधान कविता के लिए आवश्यक है ।

" यह अगोचर बातों या भावनाओं को भी जहाँ तक हो सकता है, स्थूल गोचर रूप में रखने का प्रयास करती है । " §3§

" प्रतीक विधान बिम्ब विधान से अलग दिशा में अपना कार्य करता है जब कि प्रतीक - विधान अमूर्तन की क्रिया है, और भाषा की मूलप्रकृति भी अमूर्त है । §4§

"रामस्वरूप चतुर्वेदी" का कथन है, कि "शब्द अन्ततः किसी मूर्त वस्तु अथवा स्थिति के सकेत - भर हैं । इस प्रकार सारी भाषा अमूर्तन और प्रतीकन की क्रिया है, यह प्रक्रिया जीवित और गतिशील रहे, इसके लिए भाषा का साधारण प्रयोग कर्ता चिन्तित नहीं रहता, जबकि कवि का सम्पूर्ण अस्तित्व इस प्रक्रिया के परिचालन पर निर्भर होता है । §5§

---

1. प्रिन्सिपल ऑव लिट्रेरी क्रिटिसिज्म - रिचर्ड्स - पृ0 - 267
2. आधुनिक हिन्दी कविता का अभिव्यंजना शिल्प - §भूमिका§ डॉ0हरदयाल-पृ0-6
3. चिन्तामणि - भाग - 1, पृ0 - 175
4. भाषा और सवेदना - रामस्वरूप चतुर्वेदी - पृ0 - 21
5. भाषा और सवेदना - रामस्वरूप चतुर्वेदी - पृ0 - 22

"काव्य - भाषा में प्रतीक-विधान उसे नवजीवन और नयी संवेदना प्रदान करता है, काव्य - भाषा में प्रतीक किसी एक शब्द के द्वारा व्यापक भाव को व्यक्त करता है, या कहिए उस भाव - विशेष का अमूर्तन है । " §1§

इस तरह अमूर्तन के द्वारा शब्द के अर्थ में बहुत बड़ा परिवर्तन तथा विस्तार हो जाता है, इस प्रकार बिम्ब और प्रतीक अभिव्यंजना शिल्प के आवश्यक तत्त्व माने जाते हैं ।

" इस सम्बन्ध में अपना विचार प्रकट करते हुए "आचार्य रामचन्द्र शुक्ल" का कथन है, कि "कविता में भाषा की सब शक्तियों से काम लेना पड़ता है, वस्तु या व्यापार की भावना चटकीली करने और भाव को अधिक उत्कर्ष पर पहुँचाने के लिए कभी - किसी वस्तु का आकार या गुण की भावना को उसी प्रकार के और रूप रंग मिलाकर तीव्र करने के लिए समान रूप और धर्मवाली और - और वस्तुओं को सामने लाना पड़ता है, कभी-कभी बात को भी घुमा फिराकर कहना पड़ता है। इस तरह के भिन्न - भिन्न विधान और कथन के ढ़ग अलंकार कहलाते हैं, इनके सहारे से कविता अपना प्रभाव बहुत कुछ बढ़ाती है, कहीं - कहीं तो इनके बिना काम ही नहीं चल सकता है । " §2§

इससे यह बात साफ जाहिर होती है, कि कविता के अभिव्यंजना शिल्प का सब से प्रमुख तत्त्व है, भाषा, बिम्बविधान, प्रतीक योजना, अलंकार योजना एवं छन्द योजना ये सभी अभिव्यंजना शिल्प के प्रमुख तत्त्व हैं । यदि हम दीर्घ दृष्टि से देखें, तो इन तत्त्वों में भी हमें भाषा के विभिन्न रूप दृष्टिगत होते हैं, अभिव्यंजना शिल्प तथा तत्त्व का अपना अलग-अलग कोई महत्त्व नहीं है, ये महत्त्वपूर्ण तभी माने जाते हैं, जब यह किसी कविता का अनिवार्य संलिष्ट अंग बनते हैं । कविता का अपना एक आकार होता है, और वह अपने रूप विधान में ही मूर्त होती है ।

डॉ० निर्मला जैन का कथन है, कि "अभिव्यंजना के ये सभी तत्त्व हर काव्य-कृति में बड़े सहज ढ़ग से उपलब्ध होते हैं, परन्तु इन विभिन्न तत्त्वों का संयोजन प्रत्येक काव्य-कृति में एक भिन्न प्रणाली से किया जाता है, और इस प्रणाली का ग्रहण प्रायः काव्य के प्रतिपाद्य के अनुरूप होता है ।" §3§

---

1. भाषा और संवेदना - रामस्वरूप चतुर्वेदी - पृ० - 26
2. चिन्तामणि - भाग-1, आचार्य रामचन्द्रशुक्ल - पृ० - 181
3. आधुनिक हिन्दी काव्य में रूप विधाएँ - डॉ० निर्मला जैन - पृ० - 17

सन् साठ के बाद की कविता की भाषा को सही शक्ति प्रतीकों और बिम्बों से नहीं मिली जितनी उसे अनुभव की नाटकीयता, विडम्बना, बोध, व्यंग्य की धार आदि से मिली है, वैसे देखा जाय तो साठोत्तरी कविता में, गद्यात्मकता का तत्व बढ़ा है, और इस तत्व से उसे अलग होने का कारण मात्र उसकी अनौपचारिकता, भीतरी आवेग, विडम्बना बोध से उत्पन्न अनुभव की नाटकीयता तथा व्यंग्य ही है । इस सम्बन्ध में "रघुवीर सहाय" की कविताओं की भाषा इसका ज्वलन्त उदाहरण है, जो ऊपरी तौर पर बहुत सीधी-सादी लगती है, किन्तु उसमें निहित अनुभव का नाटकीय तनाव और दैनिक जीवन से उठे ऐसे अनौपचारिक सन्दर्भ हैं, जो कला की मूल धारणा पर बलाघात् करते हैं, एक उद्धरण द्रष्टव्य है ।

" एक दिन
चिड़चिड़े बच्चों को लिए दवाखाने में खड़े-खड़े
मुझे एकाएक लगा मैं अधेड़ हो गया
न गलाबंद कोट
न दुपट्टा
न टोपी
मैं बड़ा हुआ हा हा हू हू करता हुआ । " [1]

इस काव्य की भाषा में व्यंग्य के साथ करूणा भी है, दो अलग-अलग स्थितियों में जो नाटकीय बनाव पैदा हुआ है, जो सपाटबयानी गद्य की भाषा से अलग कर देता है । रघुवीर सहाय को इस कविता में भाषा का जो अनुभव बना है, वह अलग-अलग टुकड़ों में नहीं बल्कि सम्पूर्ण रचना के अन्तर्गत बनता है, इसे - "डॉ० नामवरसिंह" ने "क्रिस्टल अनुभव" कहा है, इसमें व्यंग्य के साथ क्रीड़ा,कौतुक, आदि से चमत्कार उत्पन्न करने वाली नहीं बल्कि रचना के भीतर एक नयी शक्ति और नया जीवन मिलता है ।

भाषा के क्षेत्र में आये परिवर्तन से अब भाषा को मात्र एक चीज ही संभाले रहती है, वह है, कवि का मूड । कवि का यह मूड भाषा के क्षेत्र में एक विशेष प्रकार का आत्म संसार की रचना करता है, इसमें कवि के दिमाक में कुछ चीजें आती हैं, और चली जाती है, इनमें आपसी सम्बन्ध नहीं बनते, एक के बाद दूसरे दृश्य को लाने का यह व्यवहार मूल रूप से एक "सिनिसिज्म" पर खड़ा होता है ।

---

1. एक अधेड़ भारतीय आत्मा - आत्म हत्या के विरूद्ध - रघुवीर सहाय -पृ०- 13

"श्रीकान्त वर्मा" की कविता "माया दर्पण" से उद्धृत एक उदाहरण देखिए :-

" बरस रहा है अंधकार इस कुहासे पर
भुजा पर
मकान पर
समुद्र पर
दुनियाँ भर के तमाम
सोये हुए
बन्दरगाहों पर
डूबती हुई अंतिम
प्रार्थना पर
बरस रहा है
अंधकार ----
मगर वेश्याई स्वर्ग में
फोड़ों की तरह
उत्सव फूट रहे हैं
बरस रहा है, अंधकार
मगर उल्लू के पट्ठे
स्त्रियाँ रिझाऊ कविताएँ
लिख रहे हैं । " [1]

भाषिक अभिगम पर अपने विचार व्यक्त करते हुए "प्रभात कुमार त्रिपाठी" ने कहा है, कि " ये कविताएँ हमारे भीतर मौजूद संस्कारग्रस्त समय को तोड़कर हमें अपने असल समय में खड़ा करती थी, और इस प्रक्रिया में भाषिक विन्यास में अनुभव को मूर्त करने वाली एक तेजी थी, उसमें चीजों को नंगा-एक ब - एक नंगाकर देने वाली गूंजती लय है - एक बदलते संसार के करीब स्थिर चीजों को उपस्थित देखने की दहशत । " [2]

इसी तरह की शैली का प्रयोग "जगदीश चतुर्वेदी" ने अपनी कविताओं में व्यक्त किया है, एक उदाहरण द्रष्टव्य है :-

" एक विशाल सर्प की गिरफ्त में कैद है सारा शहर
और भयावह समुद्र मंथन के बीच पिस रहा हूँ मैं
उगल रही है संस्कृति ढेर सारे पिस्सू और गुबरीले और उद्विलाव
नंगे ओठों पर कोढ़ के घाव लिए मानवता चीख रही है - लगातार
नीली पड़ी देह और सूजे हुए वक्ष लिए स्त्रियाँ गर्भाधान से डरती हैं
निरापद नहीं है इन्सान के पिल्ले और बिल्लियाँ और शिशु
एक गोल कटघरे में बंद सब कराह रहे हैं । " [3]

---

1. नकली - कवियों की वसुन्धरा - श्रीकान्त वर्मा - माया दर्पण-पृ0 - 43
2. नकली कवियों की वसुन्धरा से उद्धृत
3. इतिहासहन्ता - जगदीश चतुर्वेदी -पृ0 - 46 [निरापद]

इस तरह की सपाटबयानी कविताओं की असफलता पर "मलयज" ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहते हैं कि "ऐसी इकहरी काव्य - भाषा का अर्थ जल्दी समझ में आ जाता है क्यों कि वह अर्थ परिभाषित होता है, और पाठक को सिर्फ "समझे जाने का सुख देता है, यह अर्थ एक ठहरा हुआ अर्थ है - रचना के भीतर अनुभूति और शब्द से बनें परिवेश में ठहरा अर्थ, उस परिवेश में वह अर्थ न अनुभूति और शब्द के किसी नये शब्द को तलाशता है न अपने में किसी नये सम्बन्ध को बनने देने की गुंजाइश रखता है, न ही जो सम्बन्ध बन गये हैं, उन्हे तोड़ता है । यह अर्थ की कविता में सदा के लिए खुद गयी छाप ही काव्य भाषा का इकहरापन है । " (1)

साठोत्तरी काव्य - भाषा पर एक नजर डालें, तो इस समय के कुछ कवियों में जैसे :- सौमित्र मोहन, जगदीश चतुर्वेदी, श्रीकान्त वर्मा, की कविताओं में यथार्थ कम नाटकीयता अधिक दिखाई पड़ती है, इससे यह पता चलता है, कि उन्हे अपने परिवेश की गहरी पहचान नहीं है, इन्होंने अपनी कविताओं में नाटकीय अनुभव के अभाव में "लिजलिजी औरतें, निर्वसन अंग, शिवलिंगों, की पूजा करते - करते नग्न होने वाली गृहिणियाँ, निर्विरोध प्रेम के लिए आकर्षक जटायु, पीप चुचाते श्लथ, मानवलिंग, टांगों के बीच धमासान युद्ध " दाँत के नीचे दबे तमाम, उठे हुए वक्ष, बिल्ली की तरह खूंखार औरतें जैसे साहसिक भावचित्र मात्र प्रदर्शन की वस्तु बन कर रह जाते हैं । एक उदाहरण देखें :-

"हर शादी शुदा मर्द कायर है
हर शादी शुदा स्त्री फ्रस्टट्रेडेड है
क्यों कि वे एक दूसरे को प्यार नहीं करते,
क्यों कि वे एक दूसरे को हेय समझते हैं
क्यों कि उन्हे पास रहने से एक दूसरे की
कमियाँ ही दिखाई देती है । (2)

कुछ कवियों ने भाषा को तनावपूर्ण बनाने का प्रयत्न किया, जिसमें सौमित्र मोहन, राजकमल चौधरी, ने कुछ शब्दों को ऐसे सन्दर्भों के साथ जोड़ा है, जिससे उसके अर्थ में तनाव सा आ जाता है, दोनों कवियों के एक - एक उदाहरण प्रस्तुत है :-

"" मेरे ही कलेजे पर मस्तिष्क पर/ वह मेरा सैनिक वह मेरा जासूस मेरा ईश्वर/नागालैन्ड में विदेशी बमों से निरीह यात्रा-रेल गाडियाँ उड़ाता है शान्ति पूर्वक/ शान्ति पूर्वक कभी भेजता है, कोरिया कभी क्यूबा कभी

---

1. कविता के साक्षात्कार - मलयज - पृ0 - 120
2. औपचारिता का परिवेश -इतिहासहन्ता -जगदीश चतुर्वेदी- पृ0- 37

पाकिस्तान कभी वियतनाम कभी अल्जीरिया/
कभी अपनी संस्कृति कभी अपनी मशीनें अपने टैंक जहाज-हथियार
मूल्य नियंत्रण के लिए कभी उड़ीसा में दुर्भिक्ष "। §1§

सौमित्र मोहन लिखते हैं, कि :-

" लुकमान अली के लिए स्वतंत्रता उसके कद से केवल तीन इंच बड़ी है/
वह बनियान की जगह तिरंगा पहनकर कला बाजियाँ खाता है
वह चाहता है कि पांचवे आम चुनाव में बौनों का प्रतिनिधित्व करें,
उन्हे टापियाँ बाटे/जाति और भाषा की कसमें खिलाए,
अपने पजामें फाड़कर सबके चूतड़ो" पर पैबंद लगाए/वह गधे की
सवारी करेगा/ अपने गुप्तचरों के साथ सारी/ प्रजा पर हमला बोल
देगा" । §2§

प्रस्तुत दी गई कविता में एक विचित्र प्रकार की व्यंजना है, प्रथम पंक्ति से इस बात का आभास होता है, कि कवि कोई गम्भीर बात कह रहा है, किन्तु ज्यों ही दूसरी पंक्ति सामने आती है, तो लगता है कि पूर्वयोजित मूड़ को एक झटका लगता है, इसी तरह तीसरी पंक्ति भी किसी गम्भीर बात की तरफ संकेत करती है, इस तरह कविता की पूरी पंक्तियों की अर्थ की योजना बीच में ही टूट जाती है, किन्तु भाषा की दृष्टि से व्यंजना पूरी तरह से सपाट है, भाषा का अर्थ यह आरोह - अवरोह, जगदीश चतुर्वेदी की कविताओं में मिलना दुलर्भ है ।

साठोत्तरी प्रतिबद्ध युवा कवियों के मन में अपने यहाँ के समय को लेकर एक तीव्र आक्रोश और स्पष्ट राजनीतिक चेतना है, किन्तु किसी रचनाकार की रचना में भाषा का क्या महत्व है, क्या इसका दोषी समय है, या राजनीति, या फिर आज के रचनाकार के अनुभव में कोई परिवर्तन आया हो, यह एक गम्भीर प्रश्न उठता है, इस सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने अपने विचार प्रकट किये हैं :-

" डॉ० परमानन्द श्रीवास्तव का ऐसी ही कविताओं की भाषा के सम्बन्ध में उनका कथन है, कि "इधर की काव्य-भाषा में देखते ही देखते ऐसे सरलीकरण की प्रवृत्ति पैदा हुई है, जिसके मूल में एक प्रकार का अतिशय निर्वैयक्तिक दृष्टिकोण है, जो वस्तु के प्रति शायद गुण हो सकता है, पर भाषा के प्रति अवश्य ही अपराध से कम नहीं है । " §3§

---

1. मुक्ति प्रसंग - नरेन्द्र मोहन द्वारा संकलित - पृ० - 114
2. लुकमान अली - सौमित्र मोहन - पृ० - 97
3. कवि कर्म और काव्य भाषा - परमानन्द श्रीवास्तव -पृ० - 40

काव्य - भाषा संवाद की सतही भाषा से इतर स्वरूप धारण करता है, क्यों कि इन्ही दिनों "केदार नाथ सिंह" ने "आलोचना" में युवा लेखन पर हुए संवाद में हिस्सा लेते हुए कहा था, कि "नया कवि भाषा का निर्णय नहीं करता, वह उसका इस्तेमाल करता है, ठीक उसी तरह जैसे वह अपने "मोजे" या "तौलिए" का इस्तेमाल करता है ।" इसमें उन्होंने भाषा की अहम् भूमिका पर ही प्रश्नचिन्ह लगा दिया है । ॥1॥

"मुक्ति बोध" ने काव्य बोध को "ज्ञानात्मक संवेदना" बताया है, यदि हम इस दौर की कविताओं के साथ उनकी तुलना करें, तो भाषा के स्तर पर इस अनुभव की बात बाहर आ जाती है, उन्होंने यथार्थ को भाषा में देखा है, किन्तु वे भी इस माहौल से घिरे हुए प्रतीत होते हैं, कविता के मूल अभिप्राय से जुड़ी भाषिक प्रस्तुति भी दृष्टव्य है :-

> " मैंने/ अपने देश की समृद्धि और सुरुचि-सम्पन्नता से/इस गरीबी और-
> तंग हाली का मेल बिठाने में/ कई-कई रातें काट दी हैं/ और -
> मुझे कोई रास्ता नहीं मिला है । ॥2॥ ॥नब्ज॥

मुक्तिबोध की भाषा में भी शब्द अपने सन्दर्भ से बाहर बड़े सपाट लगते हैं पर ये ही शब्द कविता की समग्रता में फैले एक जबर्दस्त सृजनात्मक तनाव में अपने निराली छवियाँ बिखरने लगते हैं इस लिए काव्य-भाषा में मूल प्रश्न शब्दों के चुनाव का नहीं उनके पीछे के सृजनात्मक तनाव का है । ॥3॥

इस सम्बन्ध में टिप्पणी करते हुए जॉन लिविंग स्टोन कहते हैं, कि "कविता विचार तो सम्प्रेषित करती है, पर यह उससे भी अधिक कुछ करती है, यह उस सत्य की ओर उन्मुख होती है, जो हृदय में संवेग द्वारा अपने जीवित रूप में आता है । " ॥4॥

इसके अतिरिक्त कई नये कवियों ने भी अपना विचार व्यक्त किया है, वे कवि हैं, कुमारेन्द्र, आलोक धन्वा, ज्ञानेन्द्र पति, वेणु गोपाल, डॉ० माहेश्वर,

---

1. आलोचना - जून-मार्च-1968 - केदार नाथ सिंह - पृ० - 53
2. इतिहास का संवाद - कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह - पृ० - 43
3. साठोत्तरी हिन्दी कविता की अभिव्यंजना शिल्प - डॉ० विजय कुमार -पृ०-166
4. रीवोल्ट इन पोयट्री - जोन लिविंग स्टोन

जुग मंदिर बायल, श्री हर्ष, रमेश गौड, श्री राम तिवारी, हरिहर द्विवेदी, कुमार विकल, जैसे कवियों ने राजनीतिककविताओं पर इतना सीधा और सपाट भाषा को माध्यम बनाकर, तथा अपने समय के परिवेश को लेकर कविताऐं लिखी हैं, इन काव्य-भाषा में तमाम बड़बोलेपन, आक्रोश, और गोला - बारूदी वाक्तव्यों के बावजूद अपने समय के यथार्थ की जटिलता को पहचानने उससे भिड़ने, उसके उलझावों को खोलने और इस समय के भीतर एक जीवन्त और मानवीय अनुभव की मार्मिकता को रचने की समझ और सामर्थ्य नहीं है, एक उदाहरण देखिए :-

" हम मजबूर हैं दुनियाँ के उन लोगों के साथ एकजुट होने को /
जिनका दम इस धरती पर कुछ नहीं रह गया है /
हमें माफ करना यदि हमारा गुस्सा / कटार की तरह तुम्हारे सीनों -
को चाक कर डाले या / वैसी हालत में मुझे तो कोई दुःख न होगा-
क्योंकि तुमने/ हमारी नजरों में हमारी शर्म/ हमारे सीने में हमारा प्यार/
हमारे तन से हमारा मन/ हमारे श्रम में हमारा धन/ और हमारी =
धरती से हमारा आकाश छीन लिया है / हम मैदान में खड़े है,
झोपड़ियाँ लपेटे । " §1§

राजनीतिक स्वरों वाली ये अधिकांश कवियों की ये कविताऐं अपने शिल्प में अधिकतर एक वक्तव्य से शुरू होती है, और वक्तव्य में, ही समाप्त हो जाती है । भाषा में चमचमाते हुए बिम्ब, सूक्तियाँ और चमकदार वक्तव्य हमें देखने को मिलते हैं, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" मैं जानता हूँ कि मेरे देश का समाजवाद
माल गोदाम में लटकती हुई
उन बाल्टियों की तरह है जिन पर "आग" लिखा है
और उनमें बालू और पानी भरा है । §2§

आज की कविताओं में विडम्बना का बोध भाषा में कोई चमत्कार नहीं बल्कि इसकी जगह आज करूणा का भी बोध होता है, कहीं-कहीं कुछ कवियों की भाषा में ऐसा प्रभाव है, किन्तु वे भी बदलते हुए सन्दर्भ के साथ कदम मिला रहे है, आज शिल्प की विशेषता है कि फैंटेसी और यथार्थ का मिश्रण है, जिसमें दिल को

---

1. शुरूआत - हरिहर द्विवेदी - सम्पादक - डॉ० महेश्वर - पृ० - 40
साँठोत्तरी कविता का अभिव्यंजना कौशल - डॉ० विजय कुमार
2. संसद से सड़क तक - कवि धूमिल

चौंकाने के बजाय उसे विचलित करने की क्षमता है, एक उदाहरण देखें :-

" एक लाख गूँगे / शहर की सड़कों पर /
चहल कदमी कर रहे हैं / उनकी गों - गों करती आवाज के मतलब को/
एक हजार टेलिप्रिंटर / केवल तीन शब्दों में उल्था कर/ टाप रहे हैं /
फूल चिड़ियां और नदी / और करोड़ों आँखें / इन शब्दों - को
बाँधते हुए / सोच रही है नदी में बहता फूल / शायद एक /
चिड़ियाँ है । " §1§

इस प्रकार काव्य - भाषा पर अपने विचार प्रकट करते हुए "प्रो० विजेन्द्र नारायण सिंह" ने कहा है कि "भाषा ही वह बैरोमीटर, जिससे कवि की अनुभूति का दबाव नापा जा सकता है - कविता के संघटन में भाषा प्रयोग की स्थिति केन्द्रीय है । अनुभूति के "नाभिक" तक पहुँचने का निकटतम बिन्दु यही है । §2§

श्री राम वर्मा ने स्वतन्त्रता के बाद जिस काव्य - भाषा के स्थगित होनें या नारों की ओंट में खोने की चर्चा की है, वह नयी कविता के अन्तिम चरण की कविताओं पर विशेष रूप से लागु होती है, युवा कवियों ने भाषा की अक्षमता को जल्दी पकड़ लिया, इस सन्दर्भ में "केदार नाथ सिंह" ने अपने विचार व्यक्त किया है ।

भाषा जो मैं बोलना चाहता हूँ / मेरी जिह्वा पर नहीं /
बल्कि दाँतों के बीच की जगहों में सटी हुई है । §3§

"रघुवीर सहाय" ने भी भाषा के रोमानी मुहाबरे पर आक्रमण करते हुए घोषणा की कि भाषा कोरे वादों और झूठें वादों से भ्रष्ट हो चुकी है, एक उदृरण दृष्टव्य है :-

" भाषा कोरे वादों से / वायदों से भ्रष्ट हो चुकी हैं सबकी /
न सही यह कविता / यह मेरे हाथ की छटपटाहट सही । §4§

---

1. प्रहसन प्रारम्भ होने पर्व भी - असद जैदी - बहनें और अन्य कविताएँ-पृ०- 13
2. आलोचना- जनवरी-मार्च-1970 - वक्रोति सिद्धान्त आधुनिक परिप्रेक्ष्य-पृ०- 81
3. कविताएँ - 1964- सं. अजित कुमार-विश्वनाथ त्रिपाठी- फर्क नहीं पड़ता - पृ० - 45-46
4. आत्महत्या के विरुद्ध - फिल्म के बाद चीख - रघुवीर सहाय-पृ०-74

इसके बाद भी अनेक युवा कवियों ने जिनमें "धूमिल" राजकमल चौधरी, वेणु गोपाल, आदि ने जड़ और पुरानी भाषा की निरर्थकता को रेखांकित करते हुए एक नयी काव्य-भाषा के जन्म की मांग की, यह पूरी पीढ़ी नयी काव्य - भाषा को ढूढ़ने और गढ़ने में सलग्न रही, धूमिल का कहना था, कि पुरानी और पेशेवर भाषा में किसी किस्म का अर्थ ढूँढ़ना अब व्यर्थ है । " एक उद्धरण देखें :-

" अब यहाँ कोई अर्थ खोजना व्यर्थ है
पेशेवर भाषा के तस्कर संकेतों
और बैलमुत्ती इबारतों में
अर्थ खोजना व्यर्थ है । §1§

भाषा की इस जड़ता और अपर्याप्तता की पहचान - "राजकमल चौधरी" में भी बहुत प्रखर है, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" भाषा अब वेश्या है,
सबकी बाहों में समायी हुई
सबके होठों पर बसी रहती है
उसके विवस्त्र अंगों में अब कोई अर्थ नहीं । §2§

युवा कवियों ने शब्द कोषों में आग लगाने " शीर्षक कविता में "अप्रसाद दीक्षित कहते हैं :-

" मैं शब्दकोषों में जा रहा हूँ लगाने आग
याद रखना अपना नाम
जानी - पहचानी भोगी संज्ञाएँ
ताकि नये शब्द कोष में न रह सकें
षड्यंत्रों के सूत्र, पर्याय
धोखा देने के लिए । " §3§

पुरानी धोखबाज भाषा को तोड़ने, और पुरानी भाषा को मिटा देने की जो उग्र धोषणाएँ की है, वे कम से कम इस बात का प्रमाण देती है कि वे एक ताजी और मौलिक काव्य - भाषा गढ़ने के लिए प्रतिबद्ध थी, नरेन्द्र मोहन कहते हैं कि :-

---

1. संसद से सड़क तक - धूमिल
2. कविता - 7 सम्पादक भगीरथ भार्गव -जयसिंह नीरज - पृ0 - 19
3. ज्ञानोदय दिसम्बर- 1968, अप्रसाद दीक्षित - पृ0- 27 से उद्धृत

कब तक बहकावे में पड़े रहकर
चढ़ाये रहोगे नकाब
कि पहचान संभव ही न हो
और आदमी भाषा के लिए
और भाषा आदमी के लिए
धोखा बनती जाए,
कहीं से तो शुरू करना ही होगा
"चिकनें और "गोल" शब्दों को तोड़ने का क्रम । §1§

साठोत्तरी कविता में सपाटबयानी के पनपने के कई कारण बताये गये हैं, "सपाटबयानी पद" "अशोक वाजपेयी" का दिया हुआ है । साठोत्तरी कविता में प्रतीकों और बिम्बों की भरमार की प्रतिक्रिया ने भी सपाटबयानी को प्रोत्साहित किया, इसके साथ ही कई कवियों ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया, जैसे :- धूमिल, कमलेश, लीलाधर जगूड़ी, ऋतुराज, वेणुगोपाल, श्रीकान्तवर्मा इन कवियों ने कविता के माध्यम से राजनीतिक भ्रष्टाचार को भी उजागर किया है, और जनता के दुख को सामने लाने का प्रयास किया है, एक उदाहरण देखिए :-

" पिछले साल जिस सेठ पर मुकदमा चलाया
उससे "इलैक्शन फन्ड" में चन्दा के लिए
मिनिस्टर साहब चार बार चक्कर काट चुके हैं । §2§

सपाटबयानी कविता की सबसे बड़ी विशेषता यह है, कि उसने जीवन के महत्त्वपूर्ण और गम्भीर सत्य को बड़ी सरलता तथा सहज ढ़ग से व्यक्त किया गया है, धूमिल और लीलाधर जगूड़ी की निम्नांकित पंक्तियाँ इस बात का प्रमाण है, एक उदाहरण देखिए :-

" यहाँ जनता एक गाड़ी है/एक ही संविधान के नीचे/
भूख से रिरियाती हुई फैली हथेली का नाम/"गया" है /
और भूख में/ तनी हुई मुट्ठी का नाम/ नक्सलवाडी है । §3§

" देखो । इस देश की हर सड़क / तिजोरी तक जाती/
और तुम्हारे लिए/ पोस्ट-कार्ड को कीमत बढ़ जाती है । §4§

---

1. इस हादसे में - भाषा एक कार्यवाही - नरेन्द्र मोहन- पृ0 - 72
2. एक उठा हुआ हाथ - परिदृश्य - 1967 भारत भूषण अग्रवाल- पृ0- 48
3. आलोचना - जनवरी-मार्च - 1968 पटकथा - पृ0 - 16
4. नाटक जारी है - इस व्यवस्था में - पृ0 - 48

सपाटबयानी कविता की एक विशेषता यह भी है कि इसमें सहजता, सांकेतिकता, और स्वाभाविकता की बहुलता पायी जाती है, जिसमें "धूमिल" की कविताओं में तो सारी विशेषताएँ एक साथ देखने को मिलती है, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

" एक आदमी रोटी बेलता है
दूसरा आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है न खाता है
रोटी से खिलवाड़ करता है
मैं पूछता हूँ वह तीसरा आदमी कौन है
मेरे देश की संसद मौन है । " (1)

साठोत्तरी कविता के शब्द भन्डार :

साठोत्तरी कविता की भाषा में संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, के अलावा भारत की विभिन्न प्रान्तीय आँचलिक बोलियों के शब्द भारी मात्रा में पाये जाते हैं, साठोत्तरी कविता का शब्द भन्डार बहुत विशाल है, इसमें कई शब्द पहलीबार प्रयोग में आये हैं । धर्म, दर्शन, इतिहास, राजनीति, भूगोल, समाजशास्त्र, विज्ञान आदि ने साठोत्तरी कविता के शब्द-संसार को समृद्ध किया है, यह समय शाब्दिक स्वरों की दृष्टि से भाषा दो तरह की है, एक ओर अकविता सम्प्रदाय की भाषा आश्चर्य रूप से संस्कृत निष्ठ है, दूसरी ओर प्रगतिशील कवियों की भाषा एक विशेष प्रकार की रचनात्मक उत्तेजना से लैस है, तथा साधारण बोलचाल के काफी नजदीक है, साठोत्तरी कवि तत्सम शब्दावली का विरोध करते हैं, "धूमिल" के शब्दों में अगर कहा जाय तो तत्सम शब्द उनके लिए किसी अजनबी से कम नहीं।" एक उद्धरण देखें :-

" लिपियों के अंधे कुहराम में
देखते ही देखते
एक परिचित चेहरा
किसी तत्सम शब्द की तरह अपरिचित
हो गया है । (2)

---

1. दिनमान - 23 फरवरी - 1973 - पृ0 - 12
2. संसद से सड़क तक - भाषा की रात - "धूमिल" - पृ0 - 96

विभिन्न कविता सम्प्रदायों से मिलकर निर्मित हुई साठोत्तरी कविता का शब्द संसार बहुत विशाल है, हिन्दी के तत्सम शब्दों की संस्कृतनिष्ठ शब्दावली की क्रमबद्धता को देखिए :-

असंपृक्त, अनिर्णीत, आवर्त, आत्मचेतस, आवेशालिंगन, उद्भ्रान्त, उच्छिष्ट, उर्जस्वल, औदुम्बर, कन्टकित, तजोदभास, लितिक्षा, दिग्भ्रमित, द्विधागस्त, दुर्निवार, देदीप्यमान, निर्वात, निक्षिप्त, निर्विकल्प, पर्यवसित, प्रलम्बिता, प्रत्यूष, प्रच्छन, अव्याकृति, मंत्रोचार, महानिष्क्रमण, रक्तांकित, योषा, विषण्ण, विविक्ता कृतियाँ, विश्वचेतस आदि, इसके अतिरिक्त अंग्रेजी शब्दों का आगमन हुआ, जैसे = अन्डरवीयर, अम्पायर, अलार्म, आर्कलैम्प, आर्टिस्ट, आक्टोपस, आपरेशन, टेबुल, आइसक्रीम, आनरेरी, इम्युनीटी, इन्टरव्यु, एन्टीबायोटिक, एम्बुलैंस, एसोशियेटेड, एवन, ओवरब्रीज, कार, काफी हाउस, किलोमीटर, कलैन्डर, कामरेड, कल्चर, कालिंग, कार्बन, कैरियर, गाउन, गैलरी, ट्रान्समीटर, टेलीफोन, टायर, टेप, टेपरेकार्ड, स्टैन्ड पोस्ट, टाइमबम्ब, ट्रान्सपोर्ट, पासपोर्ट, ट्रांजिस्टर, कोमनरूम, ड्राइंगरूम, डिजाइन, डाइगनोसिस, टैक्स, थर्मामीटर, डिक्री, थर्ड क्लास, पार्टी, पोस्टर, पोस्टकार्ड, पाकेट, प्लेटफार्म, पेपर वेट, प्लास्टर, पेट्रोल, पोस्टमार्टम, प्रोविडन्ट फन्ड, प्रेस, पोलियो, फाइल, फिल्म, फ्रिज, फुटपाथ आदि ।

इसी तरह उर्दू तथा फारसी के बहुत से नये शब्दों का प्रयोग काव्य - भाषा में हुआ है, जैसे - अखबार, अफसर, अजीज, आगाह, आम फहम, आजादी, आवाज, इश्तहार, इमारत, इबादत, इन्तजार, इन्कार, इत्तफाक, इशारा,इन्साफ, इल्जाम, इरादा, ईजाद, उजाला, औजार, कब्र, कदम, कवायद, करीब, करमकश, कफन, किफायत, कैदी, कोशिश, ख्याल, खातिर, खबर, खुदगर्ज, खुशी, खुशबू, खुलाशा, खैर, खैरियत खौफ, गफलत, गरीब, गलती, गलतफहमी, गमगीन, गनीमत, गुनाह, गुनाहगार, गुजर, गुलामी, गुजरना, जुल्म, जलूस, जमीन, जमात, जख्म, जरूरत, जील, ज्यादती, जालिम, जिन्दगी, जिस्म, जेल, तरीका, तारीफ, ताज्जुब, तेज, दरिया, दगा, दफ्तर, दराज, दस्तुर, दिमाग, नकल, नशा, नजर, नकाब, नफरत, नतीजा, निगाह, पोशाक, फर्क, फासला, बदमाश, बदतमीज, मुफलिसी, बहुक्म, बेशुमार, बेनकाब, बेगुनाह, महसूस, माफी, मुसीबत, मुहब्बत, मुश्किल, मेजबान, मेहरबानी, मौत, मौके, मजाक, मुलाकात, मरीज, मेज, रोज, रकावी, शातिर, शिकायत, सलाम, साजिश, सबक, आदि शब्दों का प्रयोग हमें देखने को मिलता है ।

संक्षेप में देखा जाय तो साठोत्तरी कविता के शब्द भन्डार विभिन्न क्षेत्रों में भारी मात्रा में देखने को मिलते हैं, जैसे :-

1. राजनीतिक परिवेश से लिए गए शब्द
2. आम - आदमी के जीवन के आस-पास से उठाये गए शब्द
छ. नगर और महानगर के जीवन से सम्बन्धित शब्दावली
ख. लोक जीवन से लिए गए शब्द
3. यौन सन्दर्भों से लिए गए शब्द
4. पौराणिक सन्दर्भों से लिए गए शब्द
5. तिलस्मी जासूसी तथा अन्य जीवन सन्दर्भों के शब्द । §1§

आज के जीवन में आयी विसंगतियों को किसी न किसी माध्यम से हल करने के लिए साठोत्तरी कवियों ने मिथकीय प्रसंगों तथा घटनाओं को एक नये अर्थ के साथ मिथकीय शब्दावली को भी अपनाया है, वैसे अधिकतर पौराणिक नामों या संज्ञाओं को स्वयं या अपनी पीढ़ी को अतीत से काटने के लिए प्रयोग हुआ, किन्तु युवा पीढ़ी का कवि यह स्पष्ट कर देना चाहता है, कि वह "अन्धायुग की सीमा का अतिक्रमण कर चुकी है, और पिछली पीढ़ी की तरह विवश नहीं है। " श्री राम वर्मा जैसे कवि ने तो यह घोषणा कर दी कि मेरी आत्मा अर्जुन से अधिक ऋतु और सुभद्रा से अधिक धारणशील और अभिमन्यु से अधिक श्रुतिधर्मा है।§2§

" रमेश गौड़ ने तो पुरानी पीढ़ी को धृतराष्ट्रों की पीढ़ी कह कर सम्बोधित किया है, एक उद्धरण दृष्टव्य है :-

यह धृतराष्ट्रों की वह पीढ़ी थी,
जो कस्तुरी मृग की तरह
सूरज को मुठ्ठियों में करते हुए
सूरज की तलाश में बीत गई
पूरी की पूरी पीढ़ी
आत्म रति में रीत गई । §3§

सीता, द्रौपदी, अभिमन्यु आदि बहुत से महाभारतीय संज्ञाएं साठोत्तरी कविता में विद्यमान है । "अक्षरों का विद्रोह" में "आचार्य राम देव" ने नारी को

---

1. साठोत्तरी हिन्दी कविता भाषा - डॉ० बादाम सिंह रावत - 2127 शिव सोसायटी, मेहसाना- उत्तर गुजरात
2. पहचान- 3/1 "ग्रीनविच" - श्रीराम वर्मा - पृ० - 2
3. निषेध - मेरी पीढ़ी - एक आत्म स्वीकृति - पृ० - 180

निषेधों और वर्जनाओं से मुक्त प्रेमिका के रूप में देखा है, सीता, द्रौपदी को दिये आदर्श को ठुकराया है, उनका मत है कि "सीता की अग्नि परीक्षा" तथा द्रौपदी का "भरी सभा में नग्न" की क्रूर निर्मम और यातनापूर्ण यादें जुड़ी हुई हैं ।
एक उदाहरण देखिए :-

" मेरी लिए नारी सीता नहीं / मुझे नहीं लेनी उसकी अग्नि परीक्षा /
मेरे लिए नारी द्रोपदी नहीं/ मुझे नहीं करना उसे भरी महफिल में नंगा।[1]

इस तरह मिथकों से लिए गए शब्द थोड़े में अधिक कहने के प्रयास को आगे बढ़ाते हैं, पौराणिक संज्ञायें कभी-कभी आस-पास के वातावरण को भयभीत करने का संकेत देती है, या फिर कभी ये व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति की आधार शिला को बोध कराती है । एक उदाहरण प्रस्तुत है ।

" एक काला लाल जीभ वाला वकासुर खोलता है मुँह
और लीलता है गर्दनें और कंधे और वक्षा
और युधिष्ठिर हैरान है
जो भी भाई पानी लेने जाता है
वही क्यों अटक जाता है
"फारेन एड" से यक्ष का क्या नाता है । [2]

पौराणिक संज्ञाओं के द्वारा युवा कविता को निश्चित ही एक नई दिशा मिली है, और इसे आगे बढ़ाने में कई कवियों ने जिनमें कुंवर नारायण, धर्मवीर भारती, नरेश मेहता, दुष्यन्त कुमार, जगदीश, गुप्त तथा "भारत-भूषण अग्रवाल" जैसे अनेक कवियों ने एक पौराणिक कथा के माध्यम से मिथकों का प्रयोग कर के सार्थक शब्दावली की परम्परा को आगे बढ़ाया ।

साठोत्तरी कविता विश्वगत् संवेदनाओं में जितनी बिखरी हुई है, उतनी सशक्त भूमिका उसके भाषिक अभिगम में प्रदर्शित नहीं हो पायी यह जरूर कहा जा सकता है, कि साठोत्तरी काव्य-कारों का ध्येय अपनी बात को कहने में ही सीमित रहा है, भाषा के कसाव और उसके अभिव्यंजना शिल्प पर अधिक जोर देने की कोशिश शायद उन्होंने नहीं की, बल्कि सपाटबयानी में धूमिल की मुहाबरेदार भाषा जब अपने आँचलित परिवेश से जुड़कर सम्पूर्ण सांस्कृतिक संस्कार लेकर सामने आती है, तो वहाँ कविता जनवाद से सीधी जुड़ जाती है, जहाँ भाषा के आडम्बर का व्यामोह भी नहीं रहता ।

---

1. आवेग - 9 - डूबते इतिहास का गवाह - जगदीश चतुर्वेदी - पृ0 - 34
2. एक उठा हुआ हाथ - परिदृश्य - 1967 "भारत भूषण" पृ0 - 50

चूँकि साठोत्तरी कविता का चिन्तन, उसकी विषय - वस्तु कथ्य उसका लक्ष्य विस्तार धीरे - धीरे इतना बदल गया, कि कवि एक युग प्रचलन से जुड़ने की प्रक्रिया में आत्मसात् होने का कवि दायित्व प्राप्त करने के लिए एक सामयिक परंम्परा का निर्वाह करता है, तब वह काव्य - भाषा के किसी विशिष्ट स्वरूप के प्रति अग्रहीन नहीं जान पड़ता, किसी भी बात को मारक शब्दों में प्रस्तुत करने की चेष्टा जब काव्य के तेवर में समाहित हो जाती है, तो वह संवेद्य विषय को कथ्य के स्तर पर ही उभार पाती है, जहाँ भाषिक वैशिष्टता की अपेक्षा भी नहीं रहती ।

साठोत्तरी कवियों ने कविता को गाली - गलौच की भाषा से संनिग्ध करके उसे आम - भाषा - या जन - भाषा के नाम से जोड़ने का दम्भ पाला है, धूमिल, राजकमल चौधरी या शेरजंग की कविताओं में इस प्रकार की जन-भाषा का प्रयोग देखा जा सकता है, इससे इतर सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, केदार नाथ अग्रवाल, अज्ञेय, नागार्जुन, आदि कवियों ने भाषा के अभिजात संस्कारों को बिसरने नहीं दिया है, जगदीश चतुर्वेदी अपनी बात को विषयगत् पात्रों के माहौल से ही उठाते है, और भाषा भी उसी प्रांगण की ग्रहण करती है, जब कि "नरेश मेहता," या जगदीश गुप्त भाषा को एक सुसंस्कृत शिल्प प्रदान करके उसे विशिष्टता से जोड़ने का यत्न भी करते हैं ।

अन्त में कहा जा सकता है, कि उत्तर आधुनिक काल में जहाँ कविता में भाषा की अहं भूमिका स्वीकारी गई है, वहाँ भाषा को किसी भी आरोपित आडम्बर से सर्वथा, मुक्त कर दिया गया है । रस, अलंकार, लक्षणा, व्यंजना, जैसे शास्त्रीय काव्यादर्शों के प्रति जागरूकता प्रदर्शित करते हुए कविता में भार पैदा करने के लिए भाषा को अधिक सशक्त तेवरों के साथ प्रस्तुत करने का साहस किया गया है ।

शिल्प की दृष्टि से छान्दश कविताओं में नवगीत एवं गजल विधा को पारम्परित प्रयोग किसी विशिष्ट प्रदान की ओर संकेत तो नहीं करता किन्तु रूढ़ छान्दश कविताओं में भाषा का कटकनायन अवश्य आकर्षित करता है ।

आछान्दश या गद्य कविताओं में उत्तर आधुनिक काल की प्रवृत्तियां शिल्प की दृष्टि से कुछ बदलाव अवश्य प्रस्तुत करती हैं, जहाँ कविता का स्वरूप

विचारों का हाथ पकड़कर संगठित होता है, और आगे बढ़ता है छोटे - छोटे वाक्यों में छोटे - छोटे विचारों को प्रस्तुत करता हुआ काव्य शिल्प उत्तर आधुनिक काल की विशिष्ट उपलब्धि कहा जा सकता है । शिल्प तथा भाषा का सन्तुलित समन्वय ही उत्तर आधुनिक काल की कविता की अपनी विशिष्ट पहचान बन गया है, बदलाव तो अवश्य आया है, किन्तु यह बदलाव कविता के बदलती हुई वैचारिक भूमि पर विषय और लक्ष्य को सम्प्रेरित करता हुआ सामने आया है। अतः कविता में विचार, शिल्प और भाषा का एक बड़ा ही अनोखा संतुलन देखा जा सकता है ।